





# रानी सारन्धा

( १ )

अंधेरी रात के सप्ताटे में धमान नदी घटानों से टकराती हुई ऐसी गुहावनी मालूम होती थी जैसे घुमुर घुमुर करती हुई चकियाँ । नदी के दाहिने छट पर एक टीला है । उस पर एक पुराना दुर्ग बना हुआ है जिसको जंगली वृक्षों ने घेर रखा है । टीले के पूर्वे की ओर एक छोटा-सा गांव है । यह गढ़ी और गांव दोनों एक बुन्देला सरदार के कीर्ति-चिन्ह हैं । शताब्दियों व्यतीत हो गईं, बुन्देलखण्ड में कितने ही राज्यों का उदय और अस्त हुआ, सुमलमान आये और गये, बुन्देला राजा उठे और गिरे—कोई गांव, कोई इलाका ऐसा न था जो इन दुर्गवस्थाओं से वीरिन न हो, मगर इस दुर्ग पर किसी शत्रु की विजय-पताका न लहराई और इस गांव में किसी विद्रोह का भी पदार्पण न हुआ । यह उसका मौभाग्य था ।

अतिरुद्धमिह कीर राजपूत था । यह जमाना ही ऐसा था जब मनुष्यमात्र को अपने बाहु-बल और पराक्रम ही का भरोसा था । एक और सुमलमान मेतार्ज पैर जमाये खड़ी रहती दूसरी ओर बलवान राजा अपने निर्यल भाइयों का गला बर, तथा रहने थे । अतिरुद्धमिह के पाग सवारों और



## रानी सारन्धा

( १ )

अधेरी रात के मसाटे में धमान नदी चट्टानों में टकराती हुई ऐसी गुहावनी मालूम होती थी जैसे घुमुर घुमुर कन्ती हुई शक्तियाँ । नदी के दाहिने तट पर एक टीला है । उस पर एक पुराना दुर्ग बना हुआ है जिसको जंगली वृक्षों ने घेर रखा है । टीले के पूर्व की ओर एक छोटा-सा गांव है । यह नदी और गांव दोनों एक बुन्देला मगधार के कीर्ति-चिन्ह हैं । शताब्दियाँ व्यतीत हो गईं, बुन्देलखण्ड में कितने ही राज्यों का उदय और अस्त हुआ, मुमलमान आये और गये, बुन्देला राजा उठे और गिरे—कोई गांव, कोई इलाका जेमा न था जो इन दुर्न्यवस्थाओं में पीड़ित न हो, मगर इस दुर्ग पर किसी राजा की विजय-पताका न लहराई और इस गांव में किसी विद्रोह का भी पदार्पण न हुआ । यह उसका सौभाग्य था ।

अजिन्दमिह वीर राजपूत था । यह समाना ही जेमा था जब मनुष्यमात्र को अपने दाह-बल और पराक्रम ही का भरोसा था । एक ओर मुमलमान सेनाएं पैर उभाये सड़ी रहती थीं, दूसरी ओर बलवान् राजा अपने निर्यत्न भाइयों का गला घोटने पर तयार रहने में । अजिन्दमिह के पाग सवारों और



प्रवेश किया। वह अनिच्छा था। उसके कपड़े भीगे हुए थे, और  
बदन पर कोई हथियार न था। शीतला बारपाई से उतर कर  
समीप पर बैठ गई।

मातंगा ने पूछा—भैया, यह कपड़े भीगे क्यों हैं ?

अनिच्छा—नदी में डूब आया हूँ।

मातंगा—हथियार क्या हुआ ?

अनिच्छा—हिन गये।

मातंगा—और माथे के आदमी ?

अनिच्छा—मथने कीर-तल्लि पाई।

शीतला ने वही उपान में कहा—इंधर ने ही पुराल किया।  
अगर मातंगा के तीव्रता पर बल पड़ गये और मुख्यमन्दित गये  
तो मने ह हागया। बाँकी—भैया, मुझे तुम की मयादा ओ दी।  
तेरा कमी न हुआ था।

मातंगा आड़े पर आनदनी था। उसने मुँह से यह पिक्कार  
सुनकर अनिच्छा लजा और मने में पिक्कल हा गया। वह  
कामीन, रिगो लला मने के लिए अनुमान न गया लिया था,  
रिगो भवक हो गई। वह उलट पाव लौटा और वह वह वर  
कहा कहा गया—“मातंगा मुझे मुझे मने के लिए  
न वह वह दिया वह वान मुझे कमी न मुझे

करी, कने लो आदमी मने लो न कने लो कने लो  
न कने लो अनिच्छा कने लो कने लो कने लो कने लो  
कने लो कने लो कने लो कने लो कने लो कने लो  
कने लो कने लो कने लो कने लो कने लो कने लो





विवाह कर दिया। सारन्धा ने मुंह-भांगो मुराद पाई। उसकी यह अभिलाषा कि मेरा पति बुन्देला जाति का कुल-तलक हो, पूरी हुई। यद्यपि राजा के रनिधाम में पांच रानियां थी, मगर उन्हें शीघ्र ही मालूम हो गया कि वह देवी, जो इदध में मेरी पूजा करती है, सारन्धा है।

परन्तु कुछ तेजी घटनाएं हुई कि चम्पतराय को मुराल बाद-शाह का आश्रित होना पड़ा। ये अपना राज्य अपने भाई पद्मा-मिह को सौंपकर दिल्ली चले गये। यह शाहजहां के शासन-काल का अन्तिम भाग था। शाहजारा दाराशिकोह राजकीय कार्यों को संभालते थे। सुवराज की आग्यों में शील था और चित्त में उदारता। उन्होंने चम्पतराय की वीरता की कथाएं सुनी थी, इस लिए उनका बहुत आदर-सम्मान किया, और कालपी की बहु-मूल्य जागीर उनको भेंट की, जिसकी आमदनी नौ लाख थी। यह पदना अवसर था कि चम्पतराय को आधे दिन के लड़ाई-झगड़ों में निवृत्ति मिली और उनके साथ ही भोग-विलास का प्राधान्य हुआ। रात-दिन आमोद-प्रमोद की चर्चा रहने लगी। राजा-विलास में डूबे, रानियां जड़ाऊ गद्दनों पर रीझीं। मगर सारन्धा इन दिनों बहुत उदास और संकुचित रहती। वह इन रहस्यों से दूर-दूर रहती। ये नृत्य और गान की सभाएं उसे मूर्खी प्रताप होनी।

एक दिन चम्पतराय ने सारन्धा से कहा—सारन, तुम उदास क्या रहती हो ? मैं तुम्हें कभी हसने नहीं देखना। क्या तुम मे नाराज हो ?



( ८ )

बादशाह के सामने आज आप आदर से गिर झुटाने हैं वह बल आपके नाम से कांपता था । रानी से बेटी होकर भो प्रमत्त-पित्त होना मेरे घर में नहीं है । आपने वह वह और विलास की सामग्रियां बड़े महंगे दामों मोल ली हैं ।

चम्पतराय के नेत्रों पर से एक पर्दा-मा हट गया । ये अब एक सारंग्धा की आत्मिक उषवा को न जानने थे । जैसे ये-मां-बाप का बालक मां की चर्चा सुनकर रोने लगता है, उसी तरह ओरछे की याद से चम्पतराय की आंखें सजल हो गईं । उन्होंने आदरयुक्त अमुराग के साथ सारंग्धा को हृदय से लगा लिया ।

आज से उन्हें फिर उसी उजड़ी बरती की किन्तु हुई जहां से धन और कीर्ति की अभिलाषाएं लीच साईं थीं ।

( ४ )

मा अपने खोये हुए बालक को पाकर निहाल हो जाती है । चम्पतराय के आने से मुन्देसखण्ड निहाल होगया । ओरछा के भाग जागे । नौबतें मड़ने लगी और फिर सारंग्धा के नेत्र-कमलों में जातीय अभिमान का आभास दिखाने देने लगा ।

यहां रहते-रहते महीने बीत गये । इस बीच में शाहजहां बीमार पड़ा । पहले से दुर्घ्या की अग्नि दहक रही थी । यह खबर सुनते ही ज्वाला प्रचण्ड हुई । सभाम की नियारिया होने लगी । शाहजहादा मुराद और मुहीउद्दीन अपने-अपने दल सजा कर दक्षिण से चले । वर्षा के दिन थे । उर्वरा भूमि रग-धिरग के रूप भर कर अपने सौन्दर्य को दिखाना थी ।

मुराद और मुहीउद्दीन उमंगों में भरे हुए कदम बढ़ाने चले



फिरो से युन्देलों की एक काली घटा उठी और बंग के साथ चम्पल की तरफ चली। प्रत्येक मिर्चाली वीर-रथ में भूम रहा था। सारन्धा ने दोनों राजकुमारों को गले में लगा लिया और राजा को पान का बीड़ा देकर कहा—युन्देलों की लाज अब आपके हाथ है।

आज उसका एक-एक अंग सुकरा रहा है और हृदय दृन-मित है। युन्देलों की यह सेना दैत्यकर शाहजादे कृने न ममाये। राजा यहां की अंगुल अंगुल भूमि में परिचित थे। उन्होंने युन्देलों को तो एक आड़ में छिपा दिया और शाहजादों की कौज को सजा कर नदी के किनारे-किनारे पश्चिम की ओर चले। दारा शिकोह को भ्रम हुआ कि राष्ट्र किसी अन्य घाट से नदी उतरना चाहता है। उन्होंने घाट पर से मोर्चे हटा लिये। घाट में बैठे हुए युन्देले इसी ताक में थे। बाहर निकल पड़े और उन्होंने तुरन्त ही नदी में छोड़े डाल दिये। चम्पनराय ने शाह-बादा दारा शिकोह को भुलावा देकर अपनी कौज घुमा दी और वह युन्देलों के पीछे चलता हुआ उसे पार उतार लाया। इस कठिन चाल में सात घण्टों का विलम्ब हुआ; परन्तु जाकर देखा तो मात सौ युन्देलों की लाशें तट पर रखी थीं।

राजा को देखते ही युन्देलों की हिम्मत बध गई। शाहजादों की सेना ने भी 'अज्जाहो अकबर' की ध्वनि के साथ धावा किया। बादशाही सेना में हलचल पड़ गई। उनकी पंक्तियां क्षिप्त-भिन्न हो गईं, हाथों-हाथ लड़ाई होने लगी, यहां तक कि गम हो गई। रखभूमि रुधिर से लाल हो गई और आकाश



अंग मांघे में ढला हुआ, मिह की-भी छाती; पीले की सी कमर, उसका यह प्रेम और स्वामी-भक्ति देखकर लोगों को बड़ा मुन्हाल हुआ। राजा ने आज्ञा दी—ग़रबर्दार ! इस प्रेमी पर कोई हथियार न चलाये, इसे जीता पकड़ लो, यह मेरे अस्तपल की शोभा बढ़ायेगा। जो इसे मेरे पास लायेगा, उसे धन में निहाल कर दूँगा।

घोड़ागण चारों ओर से लपकें; परन्तु किसी को साहस न होता था कि उसके निकट जा सके। कोई चुमकारता था, कोई कान्हे में फँसाने की किश्र में था। पर कोई उपाय सफल न होता था। बड़ी सिपाहियों का मेला-मा लगा हुआ था।

तब मारम्भा अपने झुंमे में निवृत्ती और निर्भय होकर घोड़े के पास चली गई। उसकी आँखों में प्रेम का प्रकाश था, छल का नहीं। घोड़े ने मिर मुका दिया। रानी ने उसकी गर्दन पर हाथ रखा, और वह उसकी पीठ मुहलाने लगी। घोड़े ने उसके अश्रु में मुँह छिपा लिया। रानी उसकी रास पकड़ कर स्येमे की ओर चली। घोड़ा इस तरह चुपचाप उसके पीछे चला, मानो मरैव में उसका मेवक हो।

पर बहुत अश्रु होता कि घोड़े ने मारम्भा से भी निष्ठुरता की होती। वह सुन्दर घोड़ा आगे चलकर इस राज-परिवार के निद स्वर्णवटित मृग मिह हुआ।

ममार एक राजा जय ॥ इस सैद न म उमा सेनापति को

विजय-बाध होता है जो अश्वमेध की रज-वानना है वह अश्वमेध





को उनके बहुमूल्य कृत्यों के उपलब्ध में बारह हजारी मनमय प्रदान किया। औरछा से बनारस और बनारस से जमुना तक उनकी जागीर नियत की गई। बुन्देला राजा फिर राज-मेवक बना, वह फिर मुग़ल-विलास में दूबा और रानी मारम्बा फिर पराधीनता के शोक में घूलने लगी।

बलीबहादुरस्वां बड़ा वाक्य-बल्लुर मनुष्य था। उसकी मृदुता ने शीघ्र ही उसे बारासाह आलमगीर का विश्वास-पात्र बना दिया। उस पर राज-मभा में सम्मान की दृष्टि पड़ने लगी।

स्वामाह्वय के मन में अपने घोड़े के हाथ में निकल जाने का बड़ा शोक था। एक दिन कुंवर छत्रमाल उसी घोड़े पर सवार होकर मैदान को गया था, वह स्वामाह्वय के महल की तरफ से निकला। पल्लवाड़ादुर ने उसे ही अदमर की गार्ड में था। उसने तुरंत अपने सेवकों को इरादा किया। राजकुमार अकेला क्या करेगा? पाँच-पाँच घर आया और उसने सारन्धा में गये सभी चार वर्गों दिया। रानी का चेहरा नमनमा गया। बोली—“मुझे इसका शोक नहीं कि घोड़ा हाथ में चला गया, शोक इस बात का है कि मैं उसे शोकर जीना क्यों सीखा? क्या मेरे शरीर से बुद्धियों का रक्त नहीं है? घोड़ा न मिलता न गहरी, दिग्गु गुं दिया देना चाहिये या कि एक बुद्धिमान बालक में था? ७१५ हूँ न जेना हूँ भी नहीं है।

[illegible]



को उसके बहुमूल्य कपड़ों के उपलक्ष्य में चारह हजार मजदूर प्रदान किया। औरदा से बनारस और बनारस में जमुना तक उसकी जागीर नियत की गई। युन्देला राजा फिर राज-मेवज बना, वह फिर मुग-बिलास में दूषा और रानी मांग्धा नि पगधीनता के शोक में धुलने लगी।

बलीबहादुरखां यह वाक्य-श्वनुर मनुष्य था। उसकी मूर्खता से शीघ्र ही उसे चारशाह आनामगीर का विश्राम-पात्र बना दिया। उस पर राज-मन्ना में सम्मान की दृष्टि पड़ने लगी।

जांसाहब के मन में अपने घोड़े के हाथ से निबल जाने का बड़ा शोक था। एक दिन कुचर छत्रमाल उसी घोड़े पर सवार होकर मैर को गया था, वह आमाहब के महल की तरफ जा निकला। बलीबहादुर नेमे ही अचमर की ताक में था। उसने तुरंत अपने सेपकों को इरादा किया। राजकुमार अनेला क्यों करता ? पांच-पांच पर आया और उसने मारग्धा से गध ममा-थार बर्णन किया। रानी का चेहरा तमनमा गया। बोली—“तुम्हें इसका शोक नहीं कि घोड़ा हाथ से चला गया, शोक इस बात का है कि तू उसे मोकड़ जीता क्यों लौटा ? क्या तेरे शरीर में युन्देला का रक्त नहीं है ? घोड़ा न मिलना न मही, किन्तु तुम्हें दिया देना चाहिए था कि एक युन्देला आत्मक से उसका घोड़ा छीन लेना हमी नहीं है।”

यह कह कर अपने पचास घोड़ाओं को तैयार होने के आज्ञा दी, श्वय आस जागल किय और घोड़ाओं के साथ बलीबहादुरखां के निशामन्वान ११ वं पहुंचे। आमाहब उर्म



रानी—तो फिर इसका निग्रह तलवार से होगा। पुन्हेला घोड़ाओं ने तलवारों से मृत की, और निरुद्ध या कि दरबार की भूमि रक्त से साधिन हो जाय, बादशाह आज़मगीर ने बाँव में आकर कहा—रानी माहिदा, आप मिषाहियों को रोहें। घोड़ा आपकी मिल जायेगा, परन्तु इसका मूल्य बहुत देना पड़ेगा।

रानी—मैं उसके लिये अपना सर्वस्व देने को तैयार हूँ।

बादशाह—आगीर और मनसब भी ?

रानी—आगीर और मनसब कोई चीज नहीं।

बादशाह—अपना राज्य भी ?

रानी—हां, राज्य भी।

बादशाह—एक घोड़े के लिये ?

रानी—नहीं, उस पदार्थ के लिये जो संसार में सबसे अधिक मूल्यवान् है।

बादशाह—यह क्या है ?

रानी—अपनी आन।

इसी भांति रानी ने घोड़े के लिये अपनी विमृत्त आगीर, सब राज-पद और राज-सम्मान सब हाथ से खोया और केवल इतना ही नहीं, भविष्य के लिये काटे बोये। इस पक्षी से अन्त दशा तक अम्पतराय को शान्ति न मिला।

( ५ )

राजा अम्पतराय ने फिर ओम्हा के किने से पदार्पण किया। उन्हें मनसब और आगीर के हाथ से निकल जाने का अन्यन्त शोक हुआ, किन्तु उन्होंने अपने मन में शिकायत का



सदैव उनके साथ रहती और उनका मादम बहाल करती। बड़ी-बड़ी आपत्तियों में जब वेरें लुप्त हो जाया—और आशा माथ छोड़ देती—आत्म-रक्षा का धर्म उसे संभाले रहता था। तीन साल के बाद अन्न में बादशाह के सूबेदारों ने आलमगीर को मूचना दी कि इस रोग का शिकार आगे भिषाय और किमी से न होगा। उत्तर आया कि मेना को हटा लो और घेर उठा लो। राजा समझा कि मरुट में निष्ठा हुई, पर वह धान शीघ्र ही धमात्मक मिट्ट हो गई।

तीन सप्ताह में बादशाही मेना ने ओरछा घेर रखा है जिस तरह कठोर यथन हृदय को छेद डालते हैं, वही तर तोपों के गोलों ने दीवारों को छेद डाला है। किले में २० हथिया आदमी घिरे हुए हैं, लेकिन उनमें आधे से अधिक स्त्रियाँ और उनसे कुछ ही कम बालक हैं। मर्तों की समस्या दिनों-दिन न्य होती जाती है। आने-जाने के मार्ग चारों तरफ से बन्द हैं हथिया का भी गुस्सा नहीं। रसद का सामान बहुत कम रह गया है। स्त्रियाँ पुरुषों और बालकों को जीवित रखने के लिए आप उपवास करती हैं। लोग बहुत हताश हो रहे हैं। औरतें मर्त्य नारायण की ओर हाथ उठा-उठा कर शत्रु को कोसती हैं। बालक-वृन्द मारे क्रोध के दीवारों की आड़ में उन पर पत्थर फेंकते हैं, जो मुश्किल में दीवार के उम पार जा पाते हैं। राजा चम्पन-राय स्वयं जंग में पीछित है। उन्होंने कई दिन में चारपाई नहीं





अपनी ज्ञान बखाना और नोचता है। मैं ऐसी मरणाच्छा  
 हो गई हूँ ? अतः इन पञ्चाङ्ग विचार इत्यत्र हुआ कि  
 यदि आत्मा विद्यमान हो तब कि इन आत्मियों  
 सम्पाद न किया जायगा तब तो आत्मा बच  
 न होगी ?

राजा—(५)

माया

राजा

छत्रसाल—हम आज रात को छापा मारेंगे ।

रानी ने संक्षेप में अपना प्रस्ताव छत्रसाल के सामने उप-  
स्थित किया और कहा—यह काम किसे सौंपा जाय ?

छत्रसाल—मुझ को ।

‘तुम इसे पूरा कर सकोगे ?’

‘हां, मुझे पूर्ण विश्वास है ।’

‘अच्छा जाओ, परमात्मा तुम्हारा मनोरथ पूरा करे ।’

छत्रसाल जब चला तो रानी ने उसे हृदय में लगा लिया  
और तब आकाश की ओर दोनों हाथ उठाकर कहा—दयानिधि,

‘अपना करुण और होनहार पुत्र मुन्देलों की आन के आगे  
कर दिया । अब हम आन को निभाना तुम्हारा काम है ।

‘इसी मूल्यवान् वस्तु अर्पित की है, इसे खोसार करो ।

अपनी जान बचाना घोर नीयता है। मैं ऐसी स्वार्यान्ध क्यों हो गई हूँ ? लेकिन एक विचार उत्पन्न हुआ। बोली— यदि आपको विश्वास हो जाय कि इन आदमियों के साथ कोई अन्याय न किया जायगा तब तो आपको चलने में कोई बाधा न होगी ?

राजा—(मोचकर) कौन विश्वास जिलायेगा ?

सारन्धा—बादशाह के सेनापति का प्रतिज्ञा-पत्र।

राजा—हां, तब तो मैं सानन्द चलूँगा।

सारन्धा विचार-सागर में डूबी। बादशाह के सेनापति से क्योंकर यह प्रतिज्ञा कराऊ ? कौन यह प्रस्ताव लेकर वहां जायगा और निर्दयी ऐसी प्रतिज्ञा करने ही क्यों लगे ? उन्हें तो अपनी विजय की पूरी आशा है। मेरे यहां ऐसा नीति-कुराल, पाखण्ड, चतुर कौन है, जो दुस्तर कार्य को सिद्ध करे ? छत्रमाल चाहें तो कर सकता है। उसमें यह सब गुण मौजूद हैं।

इस तरह मन में निश्चय करके रानी ने छत्रमाल को बुलाया। यह उसके चारों पुत्रों में सबसे बुद्धिमान् और साहसी था। रानी उसे सबसे अधिक प्यार करती थी। जब छत्रमाल ने आकर रानी को प्रणाम किया तो उसके नेत्र मजल हो गये और हृदय से दीर्घ निश्वास निकला।

छत्रमाल—माता ! मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

रानी—आज लडाई का क्या हुक है ?

छत्रमाल—हमारे पचास योद्धा अब तक काम आ चुके हैं।

रानी—बुन्देलों की लान अब डेक्कर के हाथ है।

द्वन्द्वनाल—दस आठ रात को छापा नागों ।  
 रानी ने संक्षेप में अपना प्रस्ताव द्वन्द्वनाल के मानने  
 स्थित किया और कहा—यह काम किसे मौला दाय ?

द्वन्द्वनाल—तुम को ।

‘तुम इसे पूरा कर नकोगे ?’

‘हां, तुमने पूर्ण विश्वास है ।’

‘क्या जाओ, परमात्मा तुम्हारा मनोरथ पूरा करे ।’

द्वन्द्वनाल उद बला ले रानी ने उसे हृदय में लगा लिया  
 और तब आकाश की ओर दोनों हाथ उठार कर कहा—‘देवानिधि,  
 मैं अपना कष्ट और होनहार पुत्र दुन्देलों को आज के प्रागे  
 भेंट कर दिया । अब इस काम को निम्ना तुम्हारा काम है ।  
 मैं वही मन्दराव बहुत कर्षित हो हूँ, इसे ग्योहार करो ।’

( २ )

दुन्देलों दिन प्रातःकाल नागनाथ स्नान करके धात में पूजा की  
 रानी लिये मन्दिर को चली । उनका चेहरा पीला पड़ गया  
 और हाथों में लगे अंगुष्ठों का दायें हाथ था । वह मन्दिर के  
 दर पर पहुँची तो वह अनेक दायें हाथों में आकर एक ही  
 हीन का अंग पर पर आकर वह दुन्देलों का हाथ था ।  
 वह हाथों में लगे अंगुष्ठों का दायें हाथ था । वह मन्दिर के  
 दर पर पहुँची तो वह अनेक दायें हाथों में आकर एक ही  
 हीन का अंग पर पर आकर वह दुन्देलों का हाथ था ।

मन्दिर से लौटकर मारण्धा राजा चम्पतराय के पास गई और बोली, 'प्राणनाथ, आपने जो वचन दिया, उसे पूरा कीजिए।' राजा ने चौंकर पूछा, 'तुमने अपना वादा पूरा कर दिया ?' रानी ने यह प्रतिज्ञा-पत्र राजा को दे दिया। चम्पतराय ने उसे गौरव में देखा, फिर बोले—अब मैं चलूंगा और ईश्वर ने चाहा तो एक बार फिर शत्रुओं की राखर लूंगा। लेकिन मारण, सच बताओ, इस पत्र के लिए क्या देना पड़ा है ?

रानी ने कुपिठत स्वर से कहा—बहुत कुछ।

राजा—मुन् ?

रानी—एक अधान पुत्र।

राजा को बाण-सा लगा। पूछा—बौन ? अंगदराय ?

रानी—नहीं।

राजा—रसनसाह ?

रानी—नहीं।

राजा—द्वयसाल ?

रानी—हां।

जैसे कोई पत्नी गोली खाकर परो को कड़फड़ाता है और सप बेदम होकर गिर पड़ता है, वसी भाति चम्पतराय चलंग से उधले और फिर अचेत होकर गिर पड़े। द्वयसाल उनका परम प्रिय पुत्र था। उनके भविष्य की सारी कामनाएं उमी पर अवलम्बित थी। जब मरने हुआ तब बोले, "मारण, तुमने सुरा किया। अगर द्वयमाल मारा गया तो बुन्देला वंश का नाश हो जायगा।"



मयारों का एक दल आता हुआ दिखाई दिया । उसका माथा ठनका कि अथ कुराल नहीं है । यह लोग अवश्य हमारे शत्रु हैं । फिर विचार हुआ कि शायद मेरे राजकुमार अपने आदमियों को लिये हमारी सहायता को आ रहे हों । नैराश में भी आशा माप नहीं छोड़ती । कई मिनटों तक यह इसी आशा और भय की अवस्था में रही । यहां तक कि वह दल निकट आगया और मिषादियों के साथ माक नगर आने लगे । रानी ने एक ठंडी गांभ ली, उसका शरीर दृग्गवत् कापने लगा । ये बादशाही सेना के लोग थे ।

मारम्भा ने कहारों से कहा—डोली रोक लो । पुन्देला मिषादियों ने मां तलवारें खींच ली । राजा की अवस्था बहुत गंभीर थी, किन्तु जैसे दर्दा हुई आग हवा लगने ही प्रदीप हो जाती है, उसी प्रकार इस संकट का ज्ञान होते ही उनके जर्जर शरीर में वीरात्मा चमक उठी । ये पालकी का पर्दा उठाकर बाहर निकल आये । धनुष-बाण हाथ में ले लिया । किन्तु वह धनुष, जो उनके हाथ में इन्द्र का वज्र बन जाया था, इस समय सरा भी न मुका । मिर में चरम आया, पैर धराये, और वे धरती पर गिर पड़े । भारी असफल की सूचना मिल गई । उस वंश रहित पत्नी के सहारा जो माप को अपनी गरक आने देखकर ऊपर को उचकता और फिर गिर पड़ता है, राजा अल्पमया कि ममल कर उठे और फिर गिर पड़े । मारम्भा ने उन्हें समान कर बिछाया और हाकन कोलन की चप्टा का पल्लु मह में फेरन । इनका निरुत्था—शान्तनू । इसका आग उसका मरु में एक गड्ढे





अभिलाषा है कि मरू' तो यह मन्तक आपके पद-बमलों पर हो ।

चम्पतराय—तुमने मेरा मनलस नही समझा । क्या तुम मुझे इसलिये राष्ट्रियों के हाथ में छोड़ जाओगी कि मैं बेड़िया पहने हुए दिल्ली की गलियों में निम्दा और उपहास का पात्र बनूँ ?

रानी ने जिज्ञासा-भरी दृष्टि से राजा को देखा । यह उनका मनलस न समझी ।

राजा—मैं तुमसे एक वरदान मागता हूँ ।

रानी—सहर्ष मागिए ।

राजा—यह मेरी अन्तिम प्रार्थना है । जो कुछ कहूँगा, करोगी ?

रानी—सिर के बल करूँगी ।

राजा—देखो, तुमने वचन दिया है । इनकार न करना ।

रानी—(कांपकर) आपके कहने की देर है ।

राजा—अपनी तलवार मेरी छाती में चुभो दो ।

रानी के हृदय पर बरसाघात-सा हो गया । बोली—जीवन-नाथ ! इसके आगे वह और कुछ न बोल सकती । आँखा में नैऋत्य छा गया ।

राजा—मैं बेड़िया पहनने के लिए जीवित रहना नहीं चाहता ।

रानी—मुझसे यह कैसे होगा ?

पाचया और अन्तिम मिषाही धरती पर गिरा । राजा ने झुझकार कहा—इसी जीवन पर आन निभाने का गर्व था ?



मारम्भा ने कहा—अगर हमारे पुत्रों में से कोई जीवित  
रहा हो, तो ये दोनों सारों उसे सौंप देना ।

यह कह कर उमने वही वसयार अपने हृदय में शुभो की  
जप वह अचेत होकर घटती पर गिरी तो उसका गिर रा  
बन्धनराय की छाती पर था ।

---



## दो डाक्टर

( १ )

उनमें आकाश पाताल का अन्तर था ।

दोनों डाक्टर थे । दोनों एक ही मुद्रालये में रहने थे । दोनों एक ही कालेज में पढ़े थे । दोनों ने एक साथ क्राइनल की परीक्षा पास की थी । अब दोनों एक ही बाजार में प्रेक्टिस करते थे, और दोनों की दुकानें आमने-सामने थीं ।

मगर फिर भी उनमें आकाश पाताल का अन्तर था । एक का नाम ककीरचन्द था, दूसरे का अमीरचन्द । एक पुरानी लकीर का ककीर था, दूसरा सर्वथा नवीन-विचारधीन । एक धर्म के नाम पर जान देता था, दूसरा उसकी थिल्ली उड़ाता था । एक पूजा-पाठ किये बिना मुँह में पानी डालना भी पाप समझता था, दूसरा कहता था—यह मूर्खों के युग की यादगार है । मगर फिर भी दोनों परस्पर मित्र थे, एक दूसरे की चाहते थे, एक दूसरे के सुख-दुःख में काम आते थे । यह देख कर लोगों की आश्चर्य होता था । एक ओर एक दूसरे से इतने दूर इसकी ओर एक दूसरे के इतने निकट । आग-पानी का जेसा मेल समझ न समझ देगा होगा ।

एक दिन ककीरचन्द न अमीरचन्द से कहा—“एक बात कह, मानोगे ?



अमीरचन्द ( विचगना में )—अच्छा भई, ई  
बको, क्या बनते हो ?

करीरचन्द—बचना यह है कि तुमने आज तक  
नहीं सी, न कभी मन्दिर में गये हो; मगर अब कुछ  
दिन है। कल तुम्हें पूजा करनी होगी। बनावो, बनें।

अमीरचन्द—अब मेरे बनाने की बात ही नहीं है।  
तुमने वचन ले लिया, मुझे मानना होगा, दर  
क्या लाभ होगा, यह मैं अभी तक नहीं समझ रहा।

करीरचन्द—मेरा आत्मा प्रसन्न होगा—ये सब  
पसन्द होगा कि थलो एक बार तो तुमने पद  
कर ली।

अमीरचन्द ने करीरचन्द की तरफ प्रेमपूर्ण आँखों  
और गुरगुरा कर कहा—मेरा इरादा तो न था कि तुम  
परी में जाता, मगर मालूम होना दे, तुम मुझे समझा  
आओगे। अब न मानूँ, तो मुरा-सा मुँद बना लेते।  
गाना ही न आओगे। तुम्हारा क्या बिगड़ेगा? दर  
अपमान हो आयेगी। न बाधा! यह मुश्किल है। पूजा

मद करकर वह गिगरेट का धुआँ उड़ाने लगे। करीर  
ने कहा—आज तुमने मेरा जी मुक्त कर दिया है।

अमीरचन्द—मगर यह पूजा की विधि क्या है।  
बता दो।

करीरचन्द—बनान करके आने बँठ आओ इसे





अमीरचन्द ( विषयानामे )—अच्छा भई, प्रतिज्ञा की।  
बको, क्या बरते हो ?

ककीरचन्द—ब्रता यह हूँ कि तुमने आज तक कभी पूजा  
नहीं की, न कभी मन्दिर में गये हो; मगर कल जन्माष्टमी का  
दिन है। कल तुम्हें पूजा करनी होगी। पनाओ, करोगे न ?

अमीरचन्द—अब मेरे बनाने की बात ही कहाँ रह गई ?  
तुमने बचन ले लिया, मुझे मानना होगा, मगर इसमें तुम्हें  
क्या लाभ होगा, यह मैं अभी तक नहीं समझ सका।

ककीरचन्द—मेरा आत्मा प्रसन्न होगा—मेरा परमात्मा  
प्रसन्न होगा कि बली एक बार तो तुमने उसकी पूजा  
कर ली।

अमीरचन्द ने ककीरचन्द की तरफ प्रेमपूर्ण आँखों से देखा  
और मुस्करा कर कहा—मेरा इरादा तो न था कि तुम्हारी स्वर्ग-  
पुरी में जाता, मगर मानूँ होता है, तुम मुझे घसीटकर ले ही  
आओगे। अब न मानूँ, तो मुरा-मा मुँह बना लोगे। दो दिन  
मना ही न म्वाओगे। तुम्हारा क्या विगड़ेगा ? भाभी हमसे  
अप्रसन्न हो जाएगी। न बाबा ! यह मुश्किल है। पूजा कर लेंगे।

यह कहकर वह मिगरेट का धुआँ उड़ाने लगे। ककीरचन्द  
ने कहा—आज तुमने मेरा जी मुरा कर दिया है।

अमीरचन्द—मगर यह पूजा की विधि क्या है, यह तो  
बता दो ?

ककीरचन्द—स्नान करके अर्चन बैठ जाओ और माला



हटकर खड़ा हो गया। पथराहट इतनी थी कि सारीष के मुँह से बाल भी ल निकलनी थी—ओर ओर में हाँप रहा था।

सावित्री ने सलाह से मांगे को गिरह देते हुए एक हाँव की तरफ देखा और फिर स्वेटर चुनते हुए कहा—क्यों माँजी, घबराये हुए क्यों हो ?

मांगे ने दोनों हाथों में सलाम करके कहा—माँजी ! छोड़ूँ मैं जाने क्या हो गया है ? रात को मुरा मुरा सोया था, आँखें बंद कर देखा तो बेहोश पड़ा है। बहने गरम तेल की मालि करने रहे कि माथे की ओर में आ जाय, मगर हिलना ही नहीं है अब पड़ा आया हूँ। (उभर-उभर देखकर) हाकटकर माथे पर कहा है

सावित्री ने जमी तरह गिर भुझाये कमर की तरफ उगा दिया, और स्वेटर चुनते हुए बोली—हरा पीर-पीर को सलामें कर रहे हैं—क्यों मैं बेहोश है ?

माँजी गिड़गिड़ाकर बोली—माँजी, हमें क्या मालूम ? मरे पड़ कर जाइ देते जाया करना था। आज दिन अदे तक सो रहा तो मैं ! आँखों अंगन में कहा—दुमो दगा, कब तक सो रहेगा ? हटकर खड़ा तो पड़ा पड़ा था।

बह कर रहा माँजी ने आँखों में कमर की तरफ देखा। माँजी बोली—क्यों क्यों ?

माँजी ने फिर कहा—हम मरना का मतलब नहीं है।  
 (माँजी ने फिर कहा—हम मरना का मतलब नहीं है।)

माँजी ने फिर कहा—हम मरना का मतलब नहीं है।

माँजी ने फिर कहा—हम मरना का मतलब नहीं है।



माधो—( फिर हाथ बांध कर ) नहीं मां जी, मेरा यह मुँह  
कहाँ । पर यह हर है कि कहीं और कोई तकलीफ न हो जाय ।  
यहाँ आप हुकम दें, तो सारा दिन दरवाजे पर पड़ा रहूँ,  
आप ही का सेवक हूँ ।

यह कह कर गरीब ने फिर उस कमरे की तरफ देखा,  
जिसके अन्दर डाक्टर साहब बैठे माला केर रहे थे ।

माधिश्री—बैठा बैठ, अभी निकलने हैं ।

यह कह कर माधिश्री अन्दर चली गई । माधो धूप में बैठ  
गया और मनीषा करने लगा । उसकी आँखें दरवाजे पर जमी  
थी । ऐसी उत्सुकता, ऐसी वृत्तापत्ता, ऐसी धृष्टता में किसी पुजारी  
ने अपने इषाभ्य देवता की तरफ भी सादर ही कभी देखा  
होगा । मगर दरवाजा किसी अभागि के भाग्य के समान झुलस  
ही न था । माधो सोचना था, अमोर लोग जब माला केरते हैं  
तब भी गरीबों की को तरसीक होनी है । अगर मेरी जगह  
कोई अमीर होता, तो झटपट माला छोड़कर पट खिंच लेते  
हम गरीब हैं हमारी काँटें पड़वाह ही नही रहना ।

इतन में माधो ने आँखें बंद कर लीं—  
॥ मैं दया माँ दया दे ॥ दया देना ॥ दया देना ॥

माँ दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥  
दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥  
दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥  
दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥ दया देना ॥



हैं। इतना भी न सोचा कि इसके मुँह पर लेमी पान न चढ़े  
के दिल को लग जायगी। और नूँ ये वह मय बुद्ध मुन लि  
मायी ( ठंडी प्याह भरकर )—गरीबों को मय बुद्ध !  
ही पड़ना है।

मंगिन—मगर क्या गरीबों को हिमी और परमेस्वर दे  
पनाया है ? पूजा तो फिर भी हो सकती थी। परमेस्वर की  
भावा न जाना था, पहले देख आता, फिर मजे में बैठ का  
मारा दिन पूजा करता। कौन रोकता था ?

मायी ( दरवाजे की तरफ देखकर )—आज माता, खान  
ही नहीं होनी।

मायी जानता था, इस समय मुलाना ठीक नहीं; बड़े गुम्मा  
होगे। आरपय नहीं, मार कर निकाल दें। मगर वह बाप की,  
और उसका मुँहा बेमुध था। उसके दिल को लगी थी। उसमें  
बैठा न जाता था। एक-एक क्षण एक-एक साल से भी बढ़कर  
बोतता था। बुद्ध देर दिल और दिमाग में लड़ाई होगी, रही।  
इसके बाद वह छठकर दरवाजे के पास पला गया और दरते  
दरते मगर विनीत भाव से बोला—डाक्टर साहब !

डाक्टर साहब ने मुँह से जवाब न दिया, केवल खांसकर  
रह गये; मगर मायी में इतनी बुद्धि कहां कि इस इशारे का  
मतलब समझता। वह दरवाजे के और भी पास मटक गया  
और बोला—डाक्टर साहब !

डाक्टर साहब की आंखें क्रोध से खाल हो गईं। सोचने लगे,  
क्या मुझे अब इतना भी अधिकार नहीं, कि एक घटा एकान्त





उत्तर में भगिन कुछ कहना ही चाहती थी कि अमीरबदन ने उसे इशारे में रोक दिया, और धीरे-धीरे नरम होकर बोले—  
 किसी और को ले गये होने, मैं माना फेर रहा था।

मायी—सबकार, हम तरीकों की कौन गुनना है ? आप आशा थी, आपके पास खले आये।

अब अमीरबदन का गारा मोघ शास्त्र हो चुका था। वह गुनना कर बोले—मगर क्या एक-आध बदला इतना न का गजने थे ? क्याओ ?

मायी—( गिरगिरा कर ) बिलकुल बेहोश पड़ा है, सबकार ! वरा बलबल केम में सो जीवन-भर दुखाने देता रहूंगा ! मायी उमर को कमाई है। अभी कवाहे को लूट ही मरीजा हुआ है।

अमीरबदन ने माया रस की और मूठ गहन कर उनके साथ हो लिये। होग में जाने की कुछ दवाएं भी साथ ले ली। मायी और, हम समय एक साथ चुका था। हम समय एक भूले-स्वप्न की बीटे हमको होग में जाने की कोशिश करने रहे। अब होग में था, और नीचे-नीचे जाने कर उठा था। भंगी और भंगि का रोम-रोम अमीरबदन को दुखाने दे रहा था। अमीरबदन हम-स्वप्न व व भोजन करने थे, मगर आत उन्होंने हम नियम इतना था वह था न थी। आत भूले-स्वप्न में होने पर भी गहन, मगर हृदय दिखाई देते थे। आत उन्होंने तरीकों व दवाएं मूठ को आत उन्होंने जीम न थी थी, जीम के बच निकल ही चुका था व।

अनारचन्द उस स्थाना गकर दूकान पर पहुंचे, उन स  
उनकी दीवार को छड़ी में सवा दो घंटे चुके थे। कन्नाउर  
कहा—मद रोगी लौट गये।

अनारचन्द ने कोट उतार कर खुदों पर लटकाने हुए कहा—  
लौट गये दो लौट जायें, कोई परवा नहीं।

कन्नाउर ने एक चिट्ठी उनके हाथ में देकर कहा—सो  
मंगलदान का आदेश आया था। कहा था कि जिन समय  
आयें, उनी समय भेज देना। उनकी बेटी बहुत बीमार है।

अनारचन्द ने कन्नाउर से मुंह सात करके चिट्ठी ले ली, और  
उने पड़े बिना भेज पर रख दिया।

कन्नाउर ने कहा—मेरे साहब का आदेश दो बार  
आकर लौट गया है। बड़ी ताकत कन्ना था। कहा था,  
दौरान आ जायें।

अनारचन्द ने कुर्सी पर बैठकर जवाब दिया—अच्छा !  
इसने मे हाकटर अनारचन्द ने अपना दूकान पर से धुकार  
कर दिया—कन्ना आये हैं या नहीं ? आये हैं तो भेज दो।

कन्नाउर ने जवाब दिया—कन्ना आये हैं। (अनारचन्द  
का कहना) आये हैं।

अनारचन्द ने कन्नाउर दूकान का दरवाजा खोलकर  
कन्नाउर को बुलाया—कन्ना आये हैं—कन्ना आये हैं—  
कन्ना आये हैं—कन्ना आये हैं—कन्ना आये हैं—

अमीरचन्द ने अपने-आपसे कहा—आज महाभारत खिड़ंगा ।

दो मिनट बाद कसीरचन्द ने आकर पूछा—आज तो बड़ी देर में आये । अभी तक माला फेंक रहे थे, या किमी को देखने चले गये थे ?

अमीरचन्द ने कुर्मी पर बैठे बैठे अपने मित्र की तरफ देखा, और ऐसे, जैसे कोई किमी की शिफायत करता है, बोले—भाई, क्या कहूँ ! इन मरीखों के मारे माकों में दम है । दरयाया बन्द कर लिया था, सबसे कह दिया था कि हमें कोई न गुलाये, मगर कौन सुनता है ? एक आदमी आकर दरयाया तोड़ने लगा । जी तो चाहता है, डाकटरी छोड़कर कोई और काम शुरू कर दूँ । यह भी कोई पेशा है, न दिन को चैन न रात को आराम ! कोई छः घंटे का नौकर है, कोई आठ का, यहां चौबीसों घंटों की गुलामी है । माला फेंकने का भी अवकाश नहीं ।

कसीरचन्द ने मिर दिखाया । मानो कह रहे थे, मुझे पहले ही आराम मिला था । फिर कहा—कौन आया ? कोई अमीर होगा ?

अमीरचन्द—अमीर होता, तो नाक जवाब दे देता । देता, किमी और को से जाइए ।

कसीरचन्द—तो क्या कोई भिखारी था, जिसके लिए माका घरी रह गई ?

अमीरचन्द—बड़ी अवना भर्मी माका था, बड़ा गिदगिदाव था । और गिदगिदाना क्या था, रोना था । उसका एक ही लक्ष्य था, बड़ी बीमार है मुझे क्या आ गई माका, क्या



अमीरचन्द—चलो, मान लिया : कितने बजे चलोगी ?

कलीरचन्द—यही आठ सवा आठ बजे, और क्या ! रही राख न हो जाना ।

अमीरचन्द—मेरी क्या मजाल है ।

मगर आठ बजे अमीरचन्द दूकान पर न थे । कम्पाउण्डर ने कहा—मापी आया था समोके साथ चले गये हैं ।

कलीरचन्द—बुद्ध कह गये हैं या नहीं ?

कम्पाउण्डर—कहते थे, अगर मैं एक घंटे तक न आऊँ तो दूकान बन्द करके चले जाना । मेरा खयाल है देर है लौटने । वह झोड़ फिर बीमार हो गया है ।

कलीरचन्द—अरा मोघो, मारी दुनिया भगवान के दर्शन को जा रही है, लाला मादब भगियो के मछानों की मेर कर रहे हैं । हम चाहते थे, वह भी दर्शन कर लें, मगर जब मानव ही पड़े हो, तो कोई क्या करे । छैर, हमने अपना मिश्र-वर्ष पूरा कर दिया । हथे यही संतोष है ।

कम्पाउण्डर—सबरे में मंगलनाम का आदमी आया था और कह गया था कि आपें, लो भेज देना । जब चलने को तैयार हुए, तो वही मापी आ गया और रोने लगा । बस, मेंट की गरज न गये, मापी के साथ चले गये ।

कलीरचन्द—( आश्चर्य में ) अरे, इतना मूर्खता ! वही ईग है, तो प्रीकटम चल चुकी । फिर रहेंगे, हमें तो कोई पड़ना ही नहीं । अरे बाबा, जब अपना आपका मुँह नहीं पड़ता, तो मुँह और कीज मतलब ? क्या व जमी नमान १-४ माना



अमीरचन्द ने शरीर के गिर्दे कपड़ा खिंच लिया और बोले—मुनाओ ।

फकीरचन्द—जैसा अच्छीय मगर हे कि चौक पड़ोगे । मेरा खयाल है, शायद तुम बिग्याम ही न करो । मममे (हँसता है)

अमीरचन्द—तो जितने शब्दों का भूमिका में प्रयोग कर चुके हो, उससे आधे शब्दों में वह बात भी मुना दो ।

फकीरचन्द ने कहा—तुम्हें यह तो मालूम ही है कि मैं पूजा-पाठ को बहुत महत्व देता हूँ । मगर मैं उठता आठ बजे ही हूँ । आज भगवान जाने क्यों मेरी आंग्य तीन बजे ही मुल गई । मैंने सोचा, चलो, आज इसी समय पूजा कर लो । मैं नहा धो कर पूजा के कमरे में चला गया और पूजा करने लगा । इतने में मुझे ऐसा मालूम हुआ कि कमरा किसी अलौकिक प्रकाश से भर गया है । आँख उठा कर देखा तो मेरे सामने भोकृष्ण की मूर्ति न थी, स्वयं भोकृष्ण स्वयं मुस्करा रहे थे ।

अमीरचन्द—( आश्चर्य से ) स्वयं भोकृष्ण स्वयं मुस्करा रहे थे ।

फकीरचन्द—मैंने उनकी तरफ देखा और फिर उनके चरण पकड़ लिए । उस समय मेरे मन की जो हालत थी, उसका बखान नहीं हो सकता—पूछा न ममाता था । ममका, जीवन की तपस्या सफल हो गई । भगवान अपने भक्त को दर्शन देने आ गये । हमारे स्रण में भगवान ने मुझे उठाकर सदा कर दिया, और मेरी तरफ देखा । अब उनकी आगों में आग का चितगाविया





यह कहते-कहते ककीरचन्द ने अपने मित्र के पांर प लिये, और कहा—आज तक तुम मेरे प्यारे थे; मगर अब मेरे भगवान के प्यारे हो ।

इस समय उनकी आंखों में श्रद्धा और भक्ति के ४ दलक रहे थे ।

---



# ताई

( १ )

“ताऊजी ! हमें लेलगाड़ी ( रेलगाड़ी ) ला दोगे ?”—कहता हुआ एक बचपनीय बालक बाबू रामजीदाम की ओर दौका।

बाबू मादब ने दोनों बाहें फैलाकर कहा—हां बेटा, ला दूँगे।

उनके इतना कहते-कहते बालक उनके निकट आ गया। उन्होंने बालक को गोद में उठा लिया, और उसका मुख घूमकर बोले—क्या करेगा रेलगाड़ी ?

बालक बोला—उममें बैठ के बत्ती दूँ ल जायेंगे। हम जायेंगे, चुप्री को भी ले जायेंगे। बाबू जी को नहीं ले जायेंगे। हमें लेलगाड़ी नहीं ला दूँगे। ताऊजी, मुम ला दूँगे, मुम ले जायेंगे।

बाबू—और किसे ले जायगा ?

बालक हम-भर मोचकर बोला—बड़, और किमी को नहीं ले जायेंगे।

पाम ही बाबू रामजीदाम की अर्द्धांगिनी बैठी थी। बाबू मादब ने उनकी ओर इशारा करके कहा—और अपनी नाई को नहीं ले जायेंगा ?

बालक कुछ देर तक अपनी नाई को आँखों से देखता रहा।



बच्चे को उनकी गोद में बिठाने की चेष्टा करते हुए :  
 ध्यान नहीं करोगी तो फिर रेल में नहीं बिठावेगा। क्यों।  
 मनोहर ?

मनोहर ने ताऊ की बात का उत्तर नहीं दिया। ऊपर  
 ने मनोहर को अपनी गोद से धकेल दिया। मनोहर नीचे  
 पड़ा। शरीर में तो चोट नहीं लगी, पर हृदय में चोट लगी।  
 बालक रो पड़ा।

बाबू साहब ने बालक को गोद में उठा लिया, शुभका  
 पुष्पाकर वर शुभ कराया और तत्पश्चात् उसे कुछ पैसों  
 रेलगाड़ी ला देने का व्यय देकर छोड़ दिया। बालक मनोहर  
 भय-पूर्ण दृष्टि में अपनी माँ की ओर ताकता हुआ उस स्थान  
 में चला गया।

मनोहर के चले जाने पर बाबू रामजीदाम रामेश्वरी ने  
 बोले—तुम्हारा यह कैसा व्यवहार है ? बच्चे को धरने  
 दिया। जो कमरे चोट लग जानी तो ?

रामेश्वरी मुँह मटकाकर बोली—लग जानी तो अच्छा  
 होता। क्यों मैंने खोपड़ी पर लादे देते थे ? आप ही तो मुँह  
 में ऊपर लाते थे और आप ही सब लेनी चाने करते हैं !

बाबू साहब बुढ़का बोले—दुर्गा का खोपड़ा पर लादे  
 क्यों ?

रामेश्वरी — क्यों नहीं ला सकते हैं ? तुम्हारा क्या  
 आप ही तो 'कल' के दुष्ट मान लेंगे ? नहीं, न जानें



ने तो सब खींच कर रक्खा है। जेमे ही विश्वास पर सब  
गाने तो काम कैमे चले। सब विश्वास पर ही बैठे हैं,  
काहे को किमी बात के लिए चिन्ता करे।

बापू मादय ने सोना हि मूर्त स्त्री के मुँद लगाना ठीक नही  
क्यतन्य वह स्त्री की बालका बुद्ध उतार न लेकर वहां से दूक +

( )

वापू रामजीदास धनी आदमी हैं। कपड़े की सादत  
 नाम करव है। मेन-देन भी है। इनका एक छोटा भाई है। राम  
 नाम है कृष्णदास। दोनों भाइयों के परिवार एक ही घर  
 है। वापू राम जीदास का आगू ३५ वर्ष के लगभग है, की  
 सोई भाई कृष्णदास की ३५ क लगभग। रामजीदास निमांस  
 है, कृष्णदास में दो भगवानों हैं—एक पुत्र, वही पुत्र जिस  
 पदक पर लिख हो मुक है और एक बच्चा। बच्चा की कपू  
 को करे। लगभग है।

राजनीति में अनेक प्रकार के भावों, और वस्तुओं का सम्मिलन है।  
यह भी है कि—जहाँ जहाँ एक व्यक्ति प्रभाव में आता है वह  
सम्बन्धित होनेवाली कभी सम्बन्धित हो नहीं जाता। यदि भाव की सम्मिलन  
की उच्चता की सम्मिलन सम्मिलन है। जहाँ ही वस्तु सम्मिलित  
हो जाती है वह ही है कि सम्मिलन सम्मिलन है। सम्मिलन सम्मिलन है।

It is important to note that the above results are based on the assumption that the distribution of the error term is normal. If the error term is non-normal, the estimates may be biased. However, the normality assumption is reasonable in most cases.





कुछ अपनी गरिब में नो बनाकर कहते ही नहीं हैं । गान्धर्व [ जो लिखा है, वही वे भी कहते हैं । गान्धर्व भूटा है, तो वे भी भूटे हैं । अमेजा क्या पढ़ा, अपने आगे स्त्रियों को गिनते ही नहीं । जो बाने बाप-दादा के जमाने में चली आई हैं, उन्हें भूटा बताने हैं ।

बाबू साहब—तुम बात समझती नहीं, अपनी ही ओंठे जाती हो । मैं यह नहीं कहता कि ज्योतिष गान्धर्व भूटा है । सम्भव है यह सच्चा हो । परन्तु ज्योतिषियों में अधिकारी भूटे होते हैं । उन्हें ज्योतिष का पूर्ण ज्ञान होना नहीं, दो-एक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़ कर ज्योतिषी बन बैठने हैं और लोगों को ठगते फिरते हैं । ऐसी दशा में उनकी बातों पर कैसे विश्वास किया जा सकता है ?

रामेश्वरी—हूँ, सब भूटे ही हैं, तुम्हीं एक बड़े मरुचे हो ! अच्छा, एक बात पूछती हूँ भला तुम्हारे जी में सम्मान की इच्छा क्या कभी नहीं होती ?

इस बार रामेश्वरी ने बाबू साहब के हृदय का कोमल स्थान पकड़ा । वे कुछ देर चुप रहे । परम्परा एक लम्बी साँस लेकर बोली—भगता पैसा कौन मनुष्य होगा जिसके हृदय में सम्मान का मुख देखने की इच्छा न हो ? परन्तु किया क्या जाय ? जब नहीं है, और त दोने की बोटें खाली ही हैं, तब तमक लिए अर्थ चिन्ता करने से क्या लाभ ? दुःख है मित्रा, जो बान अपनी सम्मान में होना, वही भाई की गान से भी हो रहा है जिनना स्नेह अपनी प



कुछ अपनी तरफ से तो बनाकर कहते ही नहीं हैं। शास्त्र में जो लिखा है, वही वे भी कहते हैं। शास्त्र भूटा है, तो वे भी भूटे हैं ! अपने-जो क्या पढ़ा, अपने आगे किसी को गिनने ही नहीं। जो बातें बाप-दादा के जमाने में चली आई हैं, उन्हें भूटा बताने हैं।

बाबू माहय—तुम ज्ञान समझती नहीं, अपनी ही थोड़े जाती हो। मैं यह नहीं कहना कि उद्योतिष शास्त्र भूटा है। सम्भव है यह सच्चा हो। परन्तु उद्योतिषियों में अधिकांश भूटे होते हैं। उन्हें उद्योतिष का पूर्ण ज्ञान तो होना नहीं, दो-एक छोटी-मोटी पुस्तकें पढ़ कर उद्योतिषी बन बैठते हैं और लोगों को ठगने फिरते हैं। ऐसी जगह में उनकी बातों पर कैसे विश्वास किया जा सकता है ?

रामेश्वरी—है, सब भूटे ही हैं, तुम्हीं एक बड़े सच्चे हो ! अच्छा, एक बात पूछती हूँ भला तुम्हारे जी में सन्तान की इच्छा क्या कभी नहीं होती ?

इस बार रामेश्वरी ने बाबू माहय के हृदय का कोमल स्थान पकड़ा। वे कुछ देर चुप रहे। पत्पञ्चान एक लम्बी साँस लेकर बोले—भला ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसके हृदय में सन्तान का सुख देखने की इच्छा न हो ? परन्तु किया क्या जाय ? जब नहीं है, और न होने की कोई आशा ही है, सब उसके लिए व्यर्थ चिन्ता करने में क्या लाभ ? इसके सिवा, जो बात अपनी मन्तान में होनी, वही भाई की मन्तान में भी हो रही है; जितना मैं अपनी पर हूँ, वही इन पर भी है। ओ



हो जाती है ? मुक्ति का भी क्या सहज उपाय है । ये जितने पुत्र पाने हैं सभी की तो मुक्ति हो जाती होगी ?”

रामेश्वरी निकतर होकर बोली—अब तुम से कौन बकवास करे । तुम तो अपने मामले किमी की मानते हो नहीं ।

( ३ )

मनुष्य का हृदय बड़ा समस्त-प्रेमी है । कैसी ही उपयोगी और कितनी ही सुन्दर वस्तु क्यो न हो, जब तक मनुष्य उसको पराई समझता है, तब तक उससे प्रेम नहीं करता, सिन्तु भ्राता से भ्राता और शिष्यपुत्र काम में न आने वाली वस्तु को भी यदि मनुष्य अपनी समझता है तो उससे प्रेम करता है । पराई वस्तु कितनी ही मूल्यवान् क्यो न हो कितनी ही उपयोगी क्यो न हो, कितनी सुन्दर क्यो न हो, उसके नष्ट होने पर मनुष्य दुःख भी दुःख का अनुभव नहीं करता, इत्यतः कि वह वस्तु उसकी नहीं, पराई है । अपनी वस्तु कितनी ही भ्राता हो, काम में न आने वाला हो, उसके नष्ट होने पर मनुष्य को दुःख होता है, इत्यतः कि वह अपनी है । कभी-कभी तभी भी होता है कि मनुष्य पराई वस्तु से प्रेम करने लगता है । किसी दूता से भी जब तक मनुष्य उस वस्तु का अपना बनाकर नहीं छुड़ता, अपना अपने हृदय में यह स्वीकार नहीं कर लेता कि वह वस्तु मेरा है तब तक उसे पराई समझता है । अतः ही हम इत्येव दत्ता ह्यर्थे तम मे समस्त इत्येव का अर्थ नहीं उच्यते कर्मात् । अथ उच्यते तस्य कथं वा भवेत्



उमके पीछे-पीछे मनोहर भी दौड़ता हुआ आया, और वह भी उसी की गोद में जा गिरा। रामेश्वरी उस समय मारा डेरा भूल गई। उसने दोनों बच्चों को उभी प्रकार हृदय से लगा लिया, जिस प्रकार वह मनुष्य लगाना है जो कि बच्चों के लिए तरस रहा हो। उसने बड़ी सतृप्ण भाव से दोनों को प्यार किया। उस समय यदि अपरिचित मनुष्य उसे देखता, तो उसे यही विश्वास होता कि रामेश्वरी ही उन बच्चों की माता है।

दोनों बच्चे बड़ी देर तक उसकी गोद में गेलते रहे। सहसा किसी समय किसी के आने की आहट पाकर बच्चों की माता वहां से उठ कर चली गई।

“मनोहर, ले रेलगाड़ी।” कहते हुए बाबू रामजीदास छत पर आये। उनका स्वर सुनते ही दोनों बच्चे रामेश्वरी की गोद से उछल कर निकल भागे। रामजीदास ने पहले दोनों को खूब प्यार किया, फिर बैठकर रेलगाड़ी दिखाने लगे।

इधर रामेश्वरी की नींद-सी टूटी। पति को बच्चों में मगन होने देखकर उनकी भीष्टि तन गई। बच्चों के प्रति हृदय में फिर वही घृणा और डेरा का भाव जाग उठा।

बच्चों को रेलगाड़ी देख बाबू साहब रामेश्वरी के पास आये, और मुस्कुराकर बोले—आज तो तुम बच्चा + बच्चा प्यार कर रही थीं। इससे मान्य होना है कि तुम्हारा हृदय में भी इनके प्रति कुछ प्रेम अवश्य है।

रामेश्वरी को पति का यह बात कहना बुरा लगा। उस अपनी









उम पार उमकी भोली प्रार्थना से रामेश्वरी का कलेजा बुर  
पसोज गया। वह कुछ देर तक उमकी ओर निरंतर दृष्टि से  
देखती रही। फिर उसने एक लम्बी साँस लेकर मन ही मन  
बहा—गदि यह मेरा पुत्र होता, तो आज मुझसे बढ़ कर  
आर्यभट्ट श्री मंगार में दूसरी न होनी। निगोड़ा मारा दिना  
सुन्दर है और बेनी प्यारी प्यारी बानें करता है—यही जो  
जाहना है कि उठाकर छाती से लगा लूँ।

यह सोचकर वह उमके मिर पर हाथ फेरने वाली ही थी  
कि इनने में मनोहर उन्हें मौन देखकर बोला—तुम हमें पत्र  
गनी मंगवा होगी, तो गाऊ जी से कहकर तुम्हें पिढवायेंगे।

यद्यपि बन्धे की उम भोली बात में भी बड़ी मधुरता थी,  
तथापि रामेश्वरी का मुख मोन के मारे खाल हो गया। वह उसे  
निबूट कर बोली—वा, वह वे अपने गाऊ जी में। देखें वे  
मैरा क्या कर लेंगे।

मनोहर भवभीन हाँकर उमके पास से हट आया और फिर  
सदृश नयी में आकाश में उड़ती हुई पतंगों को देखने लगा।

इस रामेश्वरी ने सोचा—वह सब गाऊजी के दुखार  
का फल है कि बल का छोड़ना मुझ भयहाना है। दुखार कर कि  
इस दुखार पर विजयी हूँ।

इसी समय आकाश में पतंग बट बट उगी छन की आर  
आई और रामेश्वरी के दुखार में लगी हुई उड़ने का आर गद।  
छन के पानी आर बहाव कावरा का मरा मधुरता मकी  
हूँ वा देख बहो ॥ १० ॥ इतना 'समय' ॥ १० ॥ आ ॥







मार कर छज्जे पर गिर पड़ी ।

रामेश्वरी एक सप्ताह तक सुगार में बेहोश पड़ी रही । कर्म कभी वह खोर में थिल्ला उठती, और कहती—देगो-देगो ब गिरा जा रहा है—उसे बचाओ—दौड़ो—मेरे मनोहर को बच लो । कभी वह कहती—बेटा मनोहर, मैंने तुम्हें नहीं बचाया हाँ, हाँ, मैं पादगो, तो बचा सकती थी—मैंने देर कर दी इसी प्रकार के प्रलाप वह किया करती ।

मनोहर की टांग उल्टी गई थी । टांग बिठा दी गई थी, ब कमजोर फिर अपनी असली दामन पर आने लगा ।

एक सप्ताह बाद रामेश्वरी का खर कम हुआ । अच्छी ठा होरा आने पर बमने पूछा—मनोहर कैसा है ?

रामजीदाग ने जवाब दिया—अच्छा है ।

रामेश्वरी—उसे मेरे पास लाओ ।

मनोहर रामेश्वरी के पास लाया गया । रामेश्वरी ने ब बड़े ध्यान में हृदय में लगाया । आँखों से आँसुओं की झाला गई । दिव्यदिवों में गला द प गया ।

रामेश्वरी कुछ दिनों बाद पूर्ण स्वस्थ हो गई । और मनाइ ने अब बसका प्राणप्राण हो गया है । एक दिन रामेश्वरी ने पूछा—





## बदला

( १ )

देरा में अकाल पड़ा। गांव-देहात उजड़ा हुआ था। दिन अवेरी रात की तरह भयानक मालूम पड़ता था। लोग दोनों के लिए तरसते, भूख में छटपटाने और बीसे के लिए रोते थे। ओह ! वैष का कितना भीषण परिहाम था। आँखें धँस गई थी, ठोकरें बैठ गई थी और शरीर निर्बल हो गया था।

गांव के लोग कहते—ईश्वर का कोप है। बरसात आकार की ओर देखते ही कटी, जाड़ा ठिठरते हुए कटा और गर्मी अब धूप की आगला में कट रही है। कैसा अद्भुत खेल है। सचमुच अकाल था। भूमि अपना मूना आँचल फैलाये हुए बैठी थी।

यह गांव सिमक रहा था। चन्द्रमा ने झीपड़ियों के उस टिमटिमाने हुए प्रकाश को घुरा लिया था। चांदनी अपनी छाया में बैठकर उन झीपड़ियों से उनकी कहानी सुनती। सिंघार खेल रहे थे। मज्जाटा था। राजनी ताद्व-नृत्य देख रही थी।

मोरी अपनी उड़ाम झीपड़ी में पड़ा सोचता था। रात आँखों से सब लड़ी थी। जागने ही कटी। जमींदार को माल-मुजारी देना है। माल बेदमन हो जायगा। यह उजड़ जायगा, सब मराने ही जायगा।



मोना को पीटकर पट्टेबाद्ध मोना लौट आया। गलने लगे मोना ने आँसू बराने हुए कहा—“बिंदी भेजना और हो मेरे मो माता तु मर्दाने में बसे जाना।

“देवार की अर्घा इन्द्रा” कहकर मोनी चला आया।

मोनी के घर में मगवानन्दाम निवारी का बड़ा मान था। गाँव में वे बड़े गीधे, सरल जाग्रत थे। मोनी की लाली उन्हें बड़ी पसन्द थी। मार्ग में जब कमा देवने माँ समझी पीट पर हाथ फेरते हुए पुषकारने। मोनी जानना था, लाली उनके यहाँ रहेगी। अगण्य मानो को लेकर मोनी उनके द्वार पर पहुँचा और प्रणाम किया।

उन्होंने पूछा—कहाँ मोना, कैसे चल ?

महाराज, सब कुछ चला गया, अब मैं माँ बन्धुई आ रहा हूँ। मोनी ने उत्तर दिया।

क्या करोगे ? दिन का फेर बड़ा विचित्र होता है। जमींदार बड़ा दुष्ट है। अन्धेद-नगरी है। कारिन्दा जो चाहता है, करता है। जमींदार को अपनी मौज से ही कुर्मत नही मिलती—कहकर तिथारी जी लाली की ओर देखने लगे।

भाग्य में जो लिखा था, सो हुआ। अब आप लोगों का आशीर्वाद लेकर जाता हूँ। टिकट के लिए रुपये नहीं है। लाली को लेकर आया हूँ, २०) रुपये का खर्चन है। लाला आपके पहा रहेंगी।—मोनी ने बड़ी निराशा से कहा।

तुम्हारे ऊपर उसे तानक भा दिया ने बाद उताड़कर हो छोड़ा। कब आओगे ? — बचान करने हुए। बार ना न रहा।



अपना अभिप्राय प्रकट किया । उसके प्रति उन लोगों की महानुभूति हुई । उन्हीं दिन साहब से भेंट हुई, मोती को नौकरी मिल गई ।

साहब की 'हेरो' थी । दूध का व्यवसाय होता था । मोती की दूध दुहने का काम मिला था । यह इस काम में निपुण थी था । साहब के सामने उसकी परीक्षा हुई थी ।

दिन-पर-दिन बीतने लगे । वह बड़े परिश्रम से अपना कार्य करता । अपने नम्र व्यवहार के कारण सब से हिल-मिल गया था । साहब उसमें बड़े प्रसन्न रहने । उसका विश्वास जमाता गया ।

मोती का लिखवाया हुआ पत्र मिला था । मोती का इज्जत पूछा था, रुपये मांगे थे, और कब आवेगा, यह भी पूछा था ।

मोती ने मोती को रुपये भेजे और उत्तर में लिखवाया—  
 "मैं अब बड़े मुश्र से बड़ी हूँ । साहब के पास रुपया जमा कर रहा हूँ । दूध के व्यवसाय से यहाँ बड़ा लाभ है, मैं अच्छी तरह उसे जान गया हूँ । कुछ दिन तोरुनी करके रुपया जमा करूँगा । फिर खुद का कारोबार करूँगा । बड़ा लाभ होगा, तब तुमको भी बुला लूँगा ।"

दो वर्ष बीत गये ।

जिल्ला में मोती न गाय और भेस मगबाई । दखन-देरते उस का भाग्य चमका । सफलता में परिणता हो चली । दूध-मक्खन



मोना ने पूछा—कहाँ चिना है ?

मोनी ने कहा—एक क्षण में कुछ आरिह !

मोना पुनः की तरह मोनी की ओर देखने लगी । कंगे  
थम पड़े ।

( ४ )

बड़ी मरम मरग्या थी । एक गुण के बाद मोनी पर लौट  
आया था । उसके स्वच्छर पर अब एक सुन्दर महान बन रहा  
था । बड़ा परितर्पित हो गया था । पैरों का प्रसाध था, गाँव के  
लोग मोनी को घेरे बैठे थे । वह अपना वृत्तान्त सुना रहा था ।  
उन्हीं लोगों की वागचीन में मोनी को मान्य हुआ कि समीक्षा  
वन के मार्ग की सीमा पर पहुँच गया है ।

लौली को देख कर मोनी दुखी हुआ । वह बूढ़ा हो गई थी ।  
अब दूध नहीं देती थी । उसकी छटाइयाँ निरुपम आँखें थी ।  
मोनी उन्हीं दिन बूढ़े माधन को लपटों में प्रसन्न कर लाली को  
अपने यहाँ में आया ।

आज गाँव की नीलामी थी । समीक्षा की छावनी पर दुखी  
बन रही थी । बड़े-बड़े मदाउन गच्छर हुए थे । विलासिता के  
बड़े में दिया हुआ समीक्षा अपने लक्ष्य दृष्टि रहा था ।

मोनी को भी मयाचार मिला । वह बड़ा उदास था । मोदी  
की बदल सावकन वह निरुपम मोना ने मसका—मोनी ने लाली  
में गाँव लौटने का गाँव में लाली का दुखी बनने में अनुभव  
कर रहा था ।





# श्री सचिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

आप पंजाब-निवासी हैं । आपके पिता श्रीयुग दा० होतारों  
राष्ट्रीय सरकार के पुराने विभाग में सम्मान प्रतिष्ठित कार्य  
कारी थे । आपका जन्म सन १८०९ में कविषा, जिला मोरारपुर  
हुआ । उन दिनों आपके पिता जी वहीं सुराई के कार्य का निर्वहण  
कर रहे थे । आपको प्रारम्भिक शिक्षा अनेक स्थानों पर हुई । बी० एम०  
सी० की परीक्षा आपने काहीर में पास की, और वहाँ आपने कुछ  
दिनों एफ० सी० का क्षेत्र में अद्वैतनिक रूप से कार्य भी किया ।

आप प्रारम्भ से ही उमरुस के राष्ट्रीय कार्यकर्ता रहे हैं । इसी  
कारण आपको जेल-यात्रा भी करनी पड़ी । जिले का चौक आपने  
सन १८९४ से है । इस वर्ष आपकी सबसे पहली कहानी इलाहाबाद  
की "सेवा" पत्रिका में छपी थी । आपने उच्च कोटि की कविताओं  
और कहानियों का सृजन किया है । आपकी कविताओं का संग्रह  
'भगवत' नाम से प्रकाशित हो चुका है, दूसरा संग्रह 'निर्वचिषा' है ।  
'विषयता', 'परम्परा', 'कीटरी की बात' आदि कई गल्प संग्रह भी  
निकल चुके हैं । 'येसर—एक जीवनी' नाम से आपने एक उपन्यास  
भी लिखा है ।

---



दीगता था कि मोहेंगर माहव का अकस्मान् आ जाना उसे एक  
दम अनधिकार प्रवेश मान्य हो रहा है ।

मोहेंगर माहव देहली के एक कालेज में प्राचीन इस्लाम  
और पुरानकर के अध्यापक है । वे उन भोजे-मे भोगों में मेरे,  
जिनका पुरान और मनोरञ्जन लक्ष्य ही है—मनोरञ्जन के लिए मैं  
वे पुरानकर की ओर ही जाने हैं । यहाँ कुम्हू पहाड़ की सुन्दर  
उपवनाओं में भी वे यही मोचने हुए आते हैं कि यहाँ भारत की  
प्राचीनतम सभ्यता के अवशेष उन्हें मिलेंगे और हिन्दू-धर्म की  
शिष्टवृत्ता के नमूने और पौनु या प्रभार या गुप्ता की मूर्तियों  
और न जाने क्या-क्या । लेकिन इनका मकसद ही भी मोहेंगर  
के प्रति—जीते-जागते स्फूर्त-युक्त सगु-अंगुत मोहेंगर के प्रति—  
उनकी आत्में सम्झी नहीं है । बाला को यही स्वर्ण देवता,  
समके पैरों के पास बढ़ने करने का शस्त्र मुनने ही उन्हें पड़ने  
तो एक हंसिनी का विचार आया, फिर मरुवती का ( यद्यपि  
बाला के हाथ में बीणा नहीं, एक छोटी-सी झड़ी थी ) उन्होंने  
अपने स्वर को यथामग्न्य कोमल बना कर पूजा—तुम यहाँ  
रहती हो ?

बाला ने उत्तर नहीं दिया, समझभू एषि से उनकी ओर  
देखकर अन्दी-जन्दी पहाड़ी पर चढ़ने लगी ।

मोहेंगर माहव सुन्कराकर आगे चल दिये । बालिका का  
भोलापन उन्हें अच्छा लगा । मोचने लगे, कितने सीधे-सादे  
सरल स्वभाव के होते हैं यहाँ के लोग । प्रकृति की सुन्दर गोद  
में खेलते हुए इन्हें न चिन्ता है न खटका है न लोभ, न लालच



गाये भी थे, लेकिन आत इस प्रकार नेट पर लगे हुए कमरे  
कनों को देखाकर लड़कियाँ गुरा हो गई। और इससे जो  
अधिक गुराई हुई इस बात से कि लम्बे और गुरा और इस से  
पग विपुल राशि का न कोई वस्तु देवने में आता है, न वस्तु  
के लिए बाढ़ तक लगाई गई है। यदाहा मध्यमा के प्रति ज्ञान  
आदर-भाव और भी बढ़ गया। क्या ज्ञान में इस तरह बल  
रह सकता है ? कनों के कभी वचन का जीवन न आता। और  
नहीं तो मृत्यु-काशेजों के लड़के ही टिपू-दल की तरह आकर मर  
माक कर देते और जिनका गाने नहीं बतना दिमाक दल। वह  
कोई बात लगावे तो हम-तक भोजनपूर्ति लट्टी वही  
रखते और फिर भी बारों और जेल की-सी दीवार लगी है  
कि कोई लुट-छिपकर न ले भागे, तब कहीं जाकर चैन से रा  
सके। और यहाँ—यहाँ बात की सीमा बनाने के लिए तक न  
का जंगल तक नहीं है। पेड़ों के नीचे जो लम्बी-लम्बी पहाड़  
घाम लग रही है, वही राम्ने के घाम आकर तक जानी है वह  
तक बात की सीमा समझ लो। यहाँ तो—

प्रोफेसर सादर के घाम ही धम्म से वृद्ध गिरा। उन्होंने  
धीरकर देखा, उन्हें आने देग तक लड़का पेड़ पर से वृद्ध है और  
उसकी अपर्याप्त आद में छिपने का प्रयत्न कर रहा है। वम  
हाथ में दो सेब हैं जिन्हें वह अपने कटे हुए भूरे कोट में किस  
गरेह छिपा लेना चाहता है।

“उसकी भेपी हुई आँखें और चेहरा माक ४४ ४४ था।  
यह थोड़ी कर रहा है।



प्रोफेसर साहब एक गांव के पास आ पहुँचे । अनुमान से उन्होंने जाना कि यह 'मनाली' गांव होगा और उन्हें यार सारा कि यहाँ पर एक दर्शनीय प्राचीन मन्दिर है । गांव के लोगों से पता चूड़ते हुए वे मनु के मन्दिर में पहुँच ही गये । मन्दिर होश धा, सुन्दर भी नहीं था, लेकिन संसार-भर में मनु का एक-मात्र मन्दिर होने के नाते यह अपना अलग महत्त्व रखता था । प्रोफेसर साहब बिचनी हो देर तक दृष्टक उसकी ओर देखते रहे, यहाँ तक कि दहेली पर बैठे हुए बूढ़े पुजारी का ध्यान भी उसी ओर आकृष्ट हो गया; आने-जाने वाले तो सीर देखते ही थे ।

प्रोफेसर साहब ने आनन्दित हृदय से पूछा—आम-पास और भी कोई मन्दिर है ।

पास खड़े एक आदमी ने कहा—नहीं बाबूजी, यहाँ कहीं मन्दिर ।

यहाँ मन्दिर नहीं ? अरे भले आदमी, यहाँ तो सैकड़ों मन्दिर होने चाहिए । यहाँ पर—

बाबूजी, यहाँ तो लोग मन्दिर देखने आते ही नहीं । कभी-कभी कोई आता है तो यह मन्त्रिस्थि का मन्दिर देख जाता है, यस और तो हम जानते नहीं ।

पुजारी ने खोंसते हुए पूछा—कौन-सा मन्दिर देखियेगा बाबू ?

कोई और मन्दिर हो, आम-पास के सब मन्दिर-मूर्तियाँ मैं देखना चाहता हूँ ।









गम, पूत-रक्त से स्नान करके अपना देवी मौन्दर्य निगारा है और अब कितने घरों में इन रंगने हुए कीड़ों की लम्बी-लम्बी जिह्वा मुँहों की श्लानि-जनक गुरगुराहट सह रही होगी—  
 धरु, देवस्य की किन्ती उपेक्षा ! मानव नभर है, वह मरु और उमकी अस्थियों पर कीड़े रेंगे, वह समझ में आता लेकिन देवता... पत्थर जड़ है। उमका महसूस कुछ नहीं ! लेकिन भूति तो देवता की है, देवस्य की, चिरम्नता की निरासी तो एक भावना है, पर भावना आदरणीय है। क्या वह मूर्ति पड़े रहने के योग्य है ? इन कीड़ों के लिए जिनके पास भ्रष्टा दिल नहीं, पूजने को हाथ नहीं, देखने को आँखें नहीं, इनके स्वप्न तक नहीं, केवल टटोलने को ये हिलती हुई गन्दी हैं— वह मूर्ति कहीं टिकाने-से होती—

न जाने क्यों प्रोफेसर साहब ने एकएक मन्दिर-टाँक हटकर चारों ओर घूमकर देखा, फिर देखा, न जाने क्यों अब पास निर्जन पाकर आश्रामन की मास ली, और फिर आ खड़े हुए।

मूर्ति गणेश की भी घुरी नहीं, लेकिन वह उतनी घुरी नहीं, न उतनी सुन्दर शैली पर निर्मित है। पीतल की मूर्ति कभी वह घात आ ही नहीं सकती जो पत्थर में होती है। की वस मूर्ति को देखने-देखते प्रोफेसर साहब के हृदय स्पन्दन-गति तीव्र होने लगी—इतनी सुन्दर जो भी वह। वे आगे बढ़कर उसे उठाने को हुए, लेकिन फिर उन्होंने बकाकर देखा, पर बहा कोई न था, कोई आना ही नहीं







आरम्भ हो गये थे। कहीं-कहीं कोई मनुष्य पोकर अघाया हुआ मोटा-सा काला भौंरा प्रोफेसर साहब के कोट में टकरा जाता था। कभी कोई तितली उनका मार्ग काट जाती थी। सूर्य को पूरा लाल हो गई थी—ये सब अपना-अपना ठिकाना खोज रहे थे। प्रोफेसर साहब भी अपने ठिकाने की ओर जा रहे थे। वन का हृदय आह्लाद से भर रहा था। उनका पहला ही दिन कितना सफल हुआ था ! कितना सौन्दर्य उन्होंने देखा था—और कितना सौन्दर्य, बहुमूल्य सौन्दर्य उन्होंने पाया था। कुल्लू का अनिर्वचनीय सौन्दर्य ! यान्त्य में यह देवताओं का अश्रित है...

उस समय प्रोफेसर साहब के भीतर तो कुल्लू-प्रेम काई नहीं, मानव-प्रेम का—संसार-भर की शुभेच्छा का रस उमड़ रहा था, उसकी बराबरी कुल्लू के रस-भरे सेव भी क्या करते ! प्रोफेसर साहब की स्नेह उकेलती हुई दृष्टि के नीचे ये सेव मानो अशिथिल पक कर और रस से भर जाते थे, उनका रंग कुछ और लाल हो जाता था। कितने रम-गद्गद् हो रहे थे प्रोफेसर साहब !

सेव के उत्थान से फिर कहीं धमाका हुआ। प्रोफेसर साहब ने देखा—एक लड़का उन्हें देखकर शाखा से कूदा है, उसके कूदने के धक्के से पत्तों की लड़ी हुई शाखा भी टूटकर आ गिरी है।

प्रोफेसर साहब ने रोव के स्वर में कहा—क्या कर रहा है !

लड़के ने महमक कर उनकी ओर देखा—बड़ी लड़का था ! हाथ का थोड़ा मा म्वाया हुआ सेव वह कोट के गुलूबन्द के भीतर छिपा रहा था।

प्रोफेसर साहब के मन में आग लग गई। लपक कर बालक





मीमनर होती गई । जब वे आभी की तरह गांव में घूमने पर जाता हुआ प्रत्येक व्यक्ति कुछ विरमय से उनकी ओर और उन्हें घेमा लगता कि वे उनकी छाती की ओर ही हैं, जैसे उस काले ओवरकोट की ओट में छिपी हुई हैं, को, और उससे पीछे भी मोनेतर मादय के हृदय में उसे पाप को वे रूप अच्छी तरह जानते हैं ।

अंधेरा होते-होते वे मन्दिर में पहुँचे । दिखाई पड़ने पड़कर उन्होंने मूर्ति को यथास्थान रखा । लौटकर चलने को आस-पास के कुछ अंधेरे में और भयानक हो गये । उन्होंने फिर सुझाया कि वे एक निधि को नष्ट कर रहे हैं, जानें क्यों उनके मन में शान्ति उमड़ आई । उन्हें पता लगाने दुनिया बहुत ठीक है, बहुत अच्छी है ।



## मृत

सारा के पास विपदाओं के मिठा और कोई सम्पत्ति न थी। यह अनाथिनी थी, विधवा थी, अन्न और वस्त्र के अभाव में जीवन बितानेवाली एक मजदूरिन थी; पर उसका हृदय महासागर की तरह गम्भीर और आकाश की तरह विस्तृत था। किन्तु उसने उसके चेहरे पर कभी विषाद की छाया तक न देखी थी। कर्म उसने किसी के आगे हाथ नहीं फैलाया था। जीवन की लड़ाई से चकता कर कभी उसने निगरा की आहें न मरी थी। जि परिस्थिति से पड़ कर कायर लोग आत्म-हत्या कर लिया कर रहे उसी परिस्थिति में रह कर वह अधिक से अधिक दिनों जीने की कामना किया करती। क्यों ? इस लिए कि उस जीवन का एक उद्देश्य था। वह चाहती थी कि अपने इकलौते पुत्र दयानिधि के जीवन का पूर्ण उत्कर्ष देख कर उसकी शर्म हो। सब कुछ भूल कर वह उसी के जीवन-निर्माण में लगी थी। यही उसका धन था। इसी धन की साधना में वह दिन रात इर्षी रहती थी। इसी साधना में उसका कर्तव्य-शक्ति अटूट बना दिया था। इसी कर्तव्य-शक्ति के सहारा वह जीवन-संघाम में धीमतापूर्वक लड़ रही थी।

मजदूरी करके वह अपने बेटे को पढ़ा रही थी। चाप भूखी रह जाती, पर दयानिधि का दिन में तीन घण्टे अवश्य खिलाती।



दयानिधि लम्बे समय की परीक्षा दे रहा था। अभी-ही-ने-परचे घाटी थे। माह का विद्याम था कि वह प्रथम श्रेणी में प्रथम होगा ही, माह ही समूचे प्रान्त के विद्यार्थियों में प्रथम रहेगा और उसे बड़े विभवों में विभोचना भी मिलेगी। पर वह विद्याम अपना बुढ़ावा न देना सका, भारी जवानी में मर गया। स्कूल के प्रधानाध्यापक ने उस दिन देखा कि दयानिधि परीक्षा-भवन में नहीं है। परचे घंट चुके थे। वे दौड़ कर दयानिधि के घर पहुंचे। वहां जाकर देखा, वह अपने मा की सेवा कर रहा है। उस बेचारी को उस समय देखा हो गया था और वह बेचैनी में लड़प रही थी।

प्रधानाध्यापक ने घबरा कर कहा—तुम परीक्षा देने जाओ, मैं इनके पास एक आदमी भेज देता हूँ।

दयानिधि ने आंखों में आंख भर कर मिर हिला दिया, जिस का अर्थ था—नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता।

अपनी, हमारी और स्कूल की प्रतिष्ठा बचा लो।

प्रधानाध्यापक ने कहा—जाओ तुम परीक्षा दे आओ, मैं बड़ा रहता हूँ।

जी, नहीं—दयानिधि आंखों में आंख भर कर हड़ता पूर्वक बोला—जिस मा की बदौलत मैं यह प्रतिष्ठा बचाने लायक हो सका हूँ, उसे उस समय पल भर के लिए भी नहीं छोड़ सकता। यह प्रतिष्ठा फिर कभी बचा नगा—इस समय तो मुझे अपनी मा की बचान का चिन्ता है।



राजा साहब के महलों में तो क्या, स्वर्ग में भी दुर्लभ है ! मुझे कमी किम् थीज थी है ? धन के लोभ में पड़ कर मैं नज़्मों से माप के साथ स्नेह का ढोंग करूँ, यह तो इस जीवन में मुझ में होने का नहीं । मोटा मांग कर खाऊँगा, भूखी मरूँगा, पर इन मोपड़ी को छोड़ कर, तुम से अलग हट कर, कहीं न जाऊँगा ।

गर्भ और उल्लास से तारा का अन्तस्तल नाच उठा । कमल घेरे की छाती से लगा लिया और गद्गद् होकर कहा—राजा साहब ! ऐसा सपूत भला मैं किसी को कैसे दे दूँ ?

राजा साहब निरारा होकर लौट आये । रह-रह कर बतड़े मन में उठ रहा था—आह ! अगर मुझे भी भगवान् एक देवा ही सपूत दे देते !







## थपना-थपना भाग्य

बहुत कुछ निरदर्य धूम धुकने पर हम मड़क के किनारे की  
बैच पर बैठ गये ।

नैनीताल की सन्ध्या धीरे-धीरे उतर रही थी । नद के रेंगे-  
से, भाप-से बादल हमारे सिरों को छू-छूकर बेरोक घूम रहे थे ।  
हलके प्रकार और अंधियासी से रज्ज कर कभी वं पाले शीतने,  
कभी मज्जद और फिर खरा देर में अदर्य पड़ जाते, जैसे हमारे  
साथ खेलना चाह रहे थे ।

पीछे हमारे पोले का मैदान फैला था । सामने अंग्रेजों का  
एक प्रमोद-गृह था, जहाँ मुहायना, रमीला बाजा बज रहा  
था और पार्श्व में था वही सुरम्य अनुपम नैनीताल ।

ताल में फिरितमा अपने सज्जद पाल उड़ाती हुई, एक-दो  
अंग्रेज यात्रियों को लेकर, इधर से उधर खेल रही थी और कहीं  
कुछ अंग्रेज एक-एक देवी सामने प्रतिष्ठापित कर अपनी मुई-सी  
शक्ति की डोंगियों को मानो शर्तें बांध कर सरपट दौड़ा रहे थे ।  
नदी-किनारे पर कुछ माहय अपनी बर्मी पानी में डाले धैर्य के  
साथ एकाम्र होकर मछली-चिन्तन कर रहे थे ।

पीछे पोला-नान म बच्चें कित्तकारिया भरते हुए हाकी खेल  
रह थे । रोग, मार पीट, गान्धी गलौच भी जेम्स म्वल का खंसा  
था । इस तमाम खेल को उतने क्षणा का उद्देश्य बना व बालक







में बेचैन हो रहा था। मष्टपट होटल पहुँच कर, इन से छुट्टी पा, गरम बिस्तर में झिपकर सो रहना चाहता था। साथ के मित्र की सनक कम उठेगी और कम क्या कुछ ठिकाना है ! और वह कैसी, क्या होगी कुछ अम्दाद है ? उन्होंने कहा—आओ, जरा यहाँ बैठें ।

हम उस टपकते कुहरे में रात को ठीक एक बजे, किनारे की उस भीगी, बर्कीली, ठण्डी हो रही सोरे की रैंग पर बैठ गये ।

पाँच-दस-पन्ध्रह मिनट हो गये । मित्र के उठने का इरादा मालूम हुआ । मैंने मुँकला कर कहा—बसिए भी जरे, जरा बैठो ..

हाथ पकड़ कर जरा बैठने के लिए जब जोर से बैठा लिखा गया, तो और जरा न रहा—सनक से छुटकारा पाता भासता था, और वह जरा बैठना भी जरा न था ।

पुपचाप बैठे तल्ल हो रहा था, कुछ रहा था कि मित्र अपना मक मोले—देखो, वह क्या है ?

मैंने देखा, कुहरे की सफेदी में कुछ ही हाथ दूर से एक काली-सी मूर्ति हमारी तरफ बढ़ी आ रही थी । मैंने कहा—होगा कोई ।

तीन गन्ध की दूरी से दीम्ब पड़ा, एक लड़का, सिर के बड़े पात सुजलाना हुआ चला आ रहा है । नंगे पैर हैं, न सिर, एक मैली-सी कमीज अटकाये है ।



फिर नौकरी करेगा ?

हो ।

बाहर चलेगा ?

हो ।

आज क्या खाना खाया ?

कुछ नहीं ।

अब खाना मिलेगा ?

नहीं मिलेगा ।

धो हो सो जायगा ?

हाँ . . ।

कदा ?

वही कही ।

इन्ही कण्ठों में ?

बापक फिर आगों में बोल कर मूक गया रहा ।  
मानी बोलती थी—बह भी बेमा मूर्ख प्रभ दे ।

मा बाग है ?

हाँ ।

कदा ?

बन्दूक बोल कर गाव य ।

तू बाग आया ?

हाँ

कदा ?

बन्दूक बोल कर गाव य — गाव : आया वही





मानिए तो, यह लड़का अच्छा निकलेगा ।  
 आप भी...जी, बस सूष है । ऐसे-मैरे को मोहर  
 लिया जाय और अगले दिन यह न जाने क्या-क्या हो  
 सम्भव हो जाय ।

आप मानने ही नहीं, मैं क्या करूँ ।  
 माँने क्या लाक ?—आप भी ..जी अच्छा मर्याद का  
 हैं । अच्छा अब हम मोने को जाने हैं ।  
 और वह चार रुपये रोज के किराने वाले कमरे में व  
 सगाहरी पर मोने मर्याद वाले गये ।

( ३ )

शरीर मादक के जाने जाने पर, होटल के बाहर एक  
 मित्र ने अपनी जेब में हाथ बांधकर कुछ टटोला, कुछ मित्र  
 भाव से हाथ बांधकर कर ले मेरी ओर देगने लगे ।

क्या ?—मैंने पूछा ।

इसे स्थान के लिए कुछ देना चाहता था—कैसे ?  
 मित्र ने कहा—मगर कम-कम के मोर हैं ?—

नोट ही मागव मत माग दें —कहा ।

मनमन में ही मैं भी नोट ही व हम कैसे ही  
 कहने लगे जब व जाना जाना का व म कल्पना करने के  
 ११११ १ ११११ १

११११ १ ११११ १

११११ १ ११११ १

११११ १ ११११ १



उदास होकर मित्र ने कहा—स्वार्थ !—जो कहो साधारण करो, निदुराई कहो—या बेदुराई !

दूमरे दिन नैनीताल-स्वर्ग के किमी काले गुलाम पगु के दुलार का यह बेटा—यह बालक, निश्चित समय पर हमारे 'होटल-दि-पथ' में नहीं आया । हम अपनी नैनीताली गैर मृगी-मुरी मानस कर चलने को हुए । उम लड़के की आम लगाये बैठे रहने की जरूरत हमने न समझी ।

मोटर में सवार होने ही यह मसाधार मिला—विद्वती राज, एक पहाड़ी बालक, मड़क के किनारे—वेड़ के तीपे ठिठुर कर सर गया ।

माने के लिए उसे यही जगह, यही दम बरस की उमर और यही जाने पियकों की कमोश मिली । आरमियों की दुनिया ने कम यही उपहार उसके नाम दिया था ।

पर बल्लनियामों ने बल्लमाया कि गरीब के मुँह पर, दाँतों, मुँहियों और पैरों पर, बरक की हल्की-सी आदर पियक गई थी । माने दुनिया की बेदुराई दुकान के लिए सकृति ने राय के लिए मकंद और दुमंद कफले का प्रयत्न कर दिया था ।

मह मुना और माया—“अपना-अपना भाग्य” ।



अथ ? भिक्षुजन मन-ही मन मोचने लगा—“अब ?”

आवाज फिर आई—

अरे बोलता क्यों नहीं ! कौन मृत की तरह खड़ा है ?

हम हैं भैया ! भिक्षुजन ।

भिक्षुजन !—क्रोध से गर्ज कर प्यादे ने कहा—भिक्षुजन-  
लाट साहब के नाती ही तो हैं । दो घंटे से पुकार रहा हूं, बोलता  
ही नहीं है । जा, जल्द रुपये ले आ, हम लोग शाम ही से तेरे  
यहां बैठे हैं ।

धरा पाम आकर भिक्षुजन ने देखा, जमींदार के दो प्यादे  
थड़े-थड़े डंडे लिये, बमदूतों की तरह उनकी ओर घूर रहे थे ।  
उसने कहा—

भायू, सरकार से हाथ जोड़ कर हमारी ओर से कह देना,  
इस साल हम सब की फसल मारी गई है । हम सब वज्र गये  
हैं । अभी मालगुजारी देने को हमारे पास एक फूटी कौड़ी भी  
नहीं है ।

फूटी कौड़ी भी नहीं है !—तमक कर एक प्यादे ने पूछा—  
ससुरे, तब खाते क्या हो ? खाने के लिए रुपये हैं और सरकार  
को देने के लिए नहीं ? सीधे से, बम, आकर लेते ही आओ ।

नहीं भायू, मथ कहना है । भगवान जानते होंगे । इस बरत  
गरीबी ने हमें बुरी तरह अपने चंगुल में फसा रखा है । सरकार  
ईश्वर है । रुक देना महीना-पंद्रह दिन सब करे । हम बेईमान  
नहीं हैं । एक-एक कौड़ी भर देंगे ।



इस बात को वह खूब समझता था कि, इनमें बागुद में पाना असम्भव है। अतः वह चुप रहा। पर, ठाकुर साहब माननेवाले थे। शायद वे कमो अखबारों को और कोमरे, महादुरपुर के प्यादों की उपस्थिति ने उनके धैर्य में बाधा

क्या है हरनाम ? महादुरपुर वालों ने मातंगुठारी न कर दी ?

सब ने वो—आश्चर्य से अधिक नम्रता और चालूसी दिखाते हुए हरनाम ने कहा—सब ने वो न कर दी, पर, एक...

एक ने अभी नहीं की ? वह कौन बदमारा है ? उसे रफ लाये हो ?

अभी नहीं दुर्ग ! इस बार महादुरपुर में कसल खा हो जाने की आम शिकायत है। विस पर भिक्षुजन के सेठ में से सब से खराब कसल दुर्ग। वह गरीब भी—।

बदमारा ! जान पड़ता है उस साले ने तुम्हें कुछ घूम देता है। मुझे भिक्षुजन की गरीबी सुमाने पता है। किसी की गरीबी से मेरा क्या सरोकार। सरकार तो मुझे गरीब समझ कर दो दिन बाद मातंगुठारी नहीं लेती। एक दिन की देर हो जाने में सुमाने का डर रहता है। फिर मैं भिक्षुजन की गरीबी क्यों दूँ ? क्या उसके सेठ में एक पौधा भी नहीं उगा ?

बहुत दूर-दूर हरनाम ने कहा—

उगा क्यों नहीं दुर्ग ! पर, इतना नहीं उगा कि वह साब-साब अपने बाल बच्चों में खिलाव भी और ठीक जगह पर अपने





मिलता था। फिर भी, मौला पाते ही वह दबी लज्जा से "दुर्गा" के सम्मुख अपनी राय कभी-कभी प्रकट कर दिया करता था। पर, दुर्गा की ओर से उनका उत्तर "अभी तुम बच्चे हो, जानो" ही मिलता।

यह पहला ही मौका था जब वह एक अमीर के उपाध्यायी की हैमियत से बहादुरपुर जा रहा था। पिता की मितलने पर पहले तो उसकी इच्छा हुई कि कोई बदला लें। पर, फिर, पिता की प्रकृति का ध्यान कर, उसने आत्मनस करना ही निश्चित किया। यह सुष होते हुए भी उस अपने मन पर विद्याग नही था। यह रास्ते भर वही सोच रहा कि यदि बहादुरपुर पहुँचने पर पिता की राय से मेरी न मिली तो ? तो ?—अब ?

गाव के मुखिया और छोटे सरकार को पन्द्रह-बीस लाखों के साथ अपने घर की ओर आने देना भिखाने भय से बाँध गया। हे ईश्वर ! क्या हान आत्मा है ? वह सपट कर घर के बाहर गया। और, एक दृष्टि भा बागवाड़ निकाल लाया। इसी पर हाट सरकार और मुखिया की बेद गया।

‘नकल’ सूक्ष्मता न कदा ६०० मरकात आये है।  
‘नल’ शब्द आनी भाषा-सूत्र कथा नरक दू ।

[illegible]



ने रहा था। इमीमे लाचार होकर, मैंने अपने प्यारे पैरों को कल बेच दिया और महाजन की भरपाई कर दी। अब मैं कहाँ हूँ ? मेरे पैर कैसे तैयार थे मुमिया बाबा ! मैं चाहता हूँ न जाना, पर उन्हें मझे में रखना था। अनजाने जानारी कलपना बाल-बच्चों के आगे आता है। इमी से मैं उन्हें बड़े मुन में रखता था। फिर, पैर ही हमारे महादेव बाबा हैं। वही सब जाना है ... ..।

कहने-कहने भिन्न-भिन्न ने सोचा कि महादेव बाबा (देव)  
 घर में जाने लगे, तो पृथ्वी कोई-न-कोई अनर्थ होने लगा  
 होगा। नदी तो ये क्यों जाने ? जमाने क्या-क्या-सूखे स्वर में  
 कहा—

मुनिदा बाबा : दण्डों के लिए हमने अपने मशरूफ बना  
 को—दण्ड को—कल बना दिया है । अब जेल में पाम को  
 है ?

इस प्रकार अन्तर्गत की उद्देश्य आता दीक्षक दीर्घ महान  
 ६. ११. १२. १३. १४. १५. १६. १७. १८. १९. २०. २१. २२. २३. २४. २५. २६. २७. २८. २९. ३०. ३१. ३२. ३३. ३४. ३५. ३६. ३७. ३८. ३९. ४०. ४१. ४२. ४३. ४४. ४५. ४६. ४७. ४८. ४९. ५०. ५१. ५२. ५३. ५४. ५५. ५६. ५७. ५८. ५९. ६०. ६१. ६२. ६३. ६४. ६५. ६६. ६७. ६८. ६९. ७०. ७१. ७२. ७३. ७४. ७५. ७६. ७७. ७८. ७९. ८०. ८१. ८२. ८३. ८४. ८५. ८६. ८७. ८८. ८९. ९०. ९१. ९२. ९३. ९४. ९५. ९६. ९७. ९८. ९९. १००.

[illegible][illegible]

1. *Journal of the American Medical Association*, 1997; 277: 1033-1036.







बादता है ।

भिक्षु । उमे अभी ले आओ ।

भिक्षु आया । द्वारकानाथ ने देखा कि उसकी बुरी हाल थी । बिलकुल मूढ़ गया था । ऐसा जान पड़ता था मानो मर्दाने में कुछ आया नहीं है । द्वारका ने पूछा—

क्या हाल है भाई भिक्षु ?

मरकार ।—आँखों में आँसू भर कर भिक्षु ने कहा—  
मुझे अपने यहाँ कोई नौकरी दिला दीजिए । हमारा परिवार तीन दिन से उपवास कर रहा है । बस कर देना चाहता हूँ, बच्चे माँ के छटपटा रहे हैं, बूढ़ों माँ का बुरा हाल है, मेरा घर नष्ट हो रहा है । कोई नौकरी दिलाइये; नहीं तो हम सब मर जायेंगे ।

द्वारका ने कहा—आज से तुम हमारे यहाँ नौकर हुए । पंद्रह रुपये मिलेंगे । इनसे से तुम्हारा काम चल सकेगा ।

बहुत है मरकार । ईश्वर आपको मुर्खों रखे । इनसे से जान बूझ जायगी । जब तक दूसरी कमाय नैवार नहीं होनी, तभी तक सब सहनीय है । फिर तो, भगवान की दया से मुझे नौकरी मिलनी होगी । दिसानों का काम नौकरी से नहीं चल सकता ।

भिक्षु की एक महान की वनमहा प्रशंसा किया कर उनके साथ । द्वारकानाथ मानस से बाहर निकला । न जाने क्यों इस की दुःखद वृत्ति, इस ज्ञान की हृदय समन अथवा जोड़ा भगवान् ।

५२      ५३      ५४      ५५      ५६      ५७      ५८      ५९      ६०      ६१      ६२      ६३      ६४      ६५      ६६      ६७      ६८      ६९      ७०      ७१      ७२      ७३      ७४      ७५      ७६      ७७      ७८      ७९      ८०      ८१      ८२      ८३      ८४      ८५      ८६      ८७      ८८      ८९      ९०      ९१      ९२      ९३      ९४      ९५      ९६      ९७      ९८      ९९      १००





गारों ओर से एक ही आवाज । मूख ! मुम्री की मां मोह  
 लगी—इंधर जिगे शरीरी देता है उसके पेट क्यों बनाता है  
 यदि आज हर्षे पेट की चिन्ता न होनी । हम दिनों से मनु  
 गिना गारों ओर घूम रहे हैं, पर हम आमागे पेट की शांति ।  
 कोई प्रवण नही हो रहा है । इन दिनों यह कैसे हो गये हैं । म  
 प्रेन गवार है । हर वक्त मूंद सूखा रहता है । दिन-पर-दिन आं  
 भीतर गुगो जा रही हैं । दिन-भर यह पेट के लिए रोने है चं  
 शा-भर हमारे लिए । हमारे बच्चों के लिए । यदि मैं न होती,  
 तो बच्चे कहाँ से होने ? नव उन्हें इतना कुछ होना ? क्या पिता  
 मैं ही उनके बच्चों का कारण हूँ । मैं ही आमागिन हूँ । वे मेरे जि  
 गिया हैं । गवकी यही हालत छोड़े ही है । जान बचना है,  
 जन्म में मैंने छोड़े बड़ा पाप किया है । मभी तो मैं मर भी  
 दुनिया हूँ । मेरे कारण यह जो दुःख भोग रहे हैं । गियों का भी  
 पति का मृत्यु देना देकर, मैं उस कर्तव्य का पालन करती हूँ ? कही  
 मेरे ही कारण तो उन्हें दुःख हो रहा है ? वह हमेशा यही कहा करने  
 कि—मैंने लूटी आगों की आनंद चिन्ता है । यदि मैं आरेक  
 होना—दुःख न लानी—ता क्या चिन्ता थी । मापु हो जाना । मेरे  
 भाग पर अपने गारों पर को मर जना । मैं हर अपने परिवार  
 के दुःख का कारण हूँ । मैं ही ।

[illegible]



मां, यहाँ क्यों आई ? यहाँ कौन स्थाना देगा ?

मैं दूंगी बेड़ा—बह कर उमने रामू की गरदन अपने हाथों  
पकड़ कर उसे अपने सामने रखी था। साथ ही, कुछ मोचड़र से  
कही। इस बार सुभी ने कहा—मां भूख ! फिर वही भूख  
हस्ताशिनी, पिशाचिनी भूख ! माता ने पुत्र को कभीसे सेना  
पर जगन्ना मेह भूमा। फिर बोली—

बेड़ा, मैंने तुझे क्या कुछ दिया। गुलाब सा मेरा स्नान  
दिनें से भूख से नश्य रहा है। अब तुझे स्थाने की तृप्तीक  
न होगी मेरे साथ।

रामू को जगन्ना माना ने अपने हृदय से हटा कर मां  
बेड़ाया। उसके दोनों हाथ रामू की गरदन की ओर बढ़े। हाथों  
की आकृति वाक्य समने बोली—मां कुछ दे रही है।

क्या है मा ? स्थाना ?

हा बेड़ा ! थोड़ा से वनक कर, लूचने-पकने पुत्र की गरदन  
पर अमर्त्यमन्त्री मा ने गेट दिया। इनने बार से कही कि वह सौं  
मो न से सका। जगन्ना-भर वाक्य वाक्य के भीतर से बाप  
आइ—दुःख !

दुःख का जो वाक्य कहे कर अपने गुलाब वहा वा क  
वा काल काल न गला वहा मां काल का एक वहा मां  
काल काल काल काल काल काल काल काल काल काल  
काल काल काल काल काल काल काल काल काल काल

काल काल काल काल काल काल काल काल काल काल  
काल काल काल काल काल काल काल काल काल काल काल



## ज्वालादत्त शर्मा

"मन्दचक्र" और भावार्थवार दोनों का सुन्दर सम्मिश्रण कला का निर्वाह करनेवाले कलाकारों में शर्मा जी का नाम उभरेगा है। मैमचन्द जी ने अपनी अपूर्व प्रतिभा द्वारा कहानी-संसार में गिनीन पारा का मूयदान किया था उसके प्रमुख लेखकों में शर्माजी हैं। उनकी तरह आपकी शैली व्याख्यात्मक है। प्रभाव के लिए कथनांशों की स्थिति पर पूरा-पूरा विश्वास नहीं रखते और वाद्यों की सहृदयता अथवा स्थिति पर आप बहुत ध्यान देते हैं। अतः कलाकार के साथ-साथ आप गूढ़म रूप में सुख के रूप में भी चले हैं। आपका साहित्यिक जीवन मरण १९७१ सातम होता है। आपकी पहली कहानी उस वर्ष "मरहती" निकली थी।

प्रमुख कहानी आपकी कहानी-कला का अच्छा नमूना है।



और रहने के मकान में—जायदाद के लयरोग—दर्रों के  
 कीटाणुओं ने प्रवेश कर लिया था। रामप्रसाद ने अपनी कन्या  
 चमेली के विवाह में शहर के मूर्ख और निष्ठुर आदमियों के  
 मुंह में चिकनी-घुपड़ी बातें सुनने के लिए बहुत रूपया खर्च  
 किया था। विवाह के बाद, कोई एक सप्ताह तक, पक्कन  
 की सुगन्धि के साथ-साथ रामप्रसाद की इस मूर्खता-पूर्ण  
 चरारता की वृत्ति भी मुदक्के में सर्वत्र, और शहर में सर्वत्र  
 फैल रही थी। सन्ता कचौरी, मोतीचूर के लड्डू, गोल बाजूर  
 कुरकुरी इमरती और ममालेदार तरकारियाँ के साथ-साथ  
 जमकने हुए "इन्दुमम उज्ज्वल" स्पर्श की दृष्टि की  
 जहाँ-तहाँ होनी थी। किन्तु रामप्रसाद के घर की कम  
 नादनी में, उनके विमल घर की सफेद चार में,  
 कलक न हो, कोई घटका न हो, गो बात नहीं।  
 ममालेदार, मिन्होंने अयोध्या में कई दिन पहले से अगले  
 करने रहने के कारण, बुरी तरह सन्ता कचौरी और  
 मिश्री सुभावम मिठाइयों का धर्म किया था, अपने दुःख  
 प्रतुनिदल स्वभाव में मग्न होकर बात की बात निर  
 और रामप्रसाद की दूध की गंगा में बिच मिश्राने लगे।  
 कहना था—कचौरियों में मोचन कम हास्य गया और  
 बनाना था कि शाक में नोन ज्यादा हो गया था। कोई सर  
 की बरी का राम, जो कोई वजन की बरफी को मग्न  
 का। मग्नत्व यह कि रामप्रसाद की मूर्खता का  
 करने करने न। प्रजा का का काम न था। किन्तु पते





करते थे। उनके हिसाब से यदि राधाचरण न पड़ता तो उन्हें श्रुती न बनना पड़ता। छोटी-छोटी बातों पर रामप्रसाद एक-परम से कहते—अभी तुने हमारी क्या सेवा की है। एक माल में पचास रुपये महीना कमाने लगा है। मुझे देना, ठीके पढ़ाई के कारण ही तबाह हो गया। इतना देना हो गया।

गुरील राधाचरण अपने मूर्ख चाचा की बात का पतल देता था। नीची गर्दन करके वह सब कुछ गुन लेता था।

राधाचरण की शुरु में चाचा और चाची को बेशक दुःख हुआ; पर दुःख की कम तीव्र भाग में जलते हुए भी रामप्रसाद ने राधाचरण के कारण क्रयंदारी का शिक करने की प्रवृत्ति के बड़े ध्यान में सुरक्षित रखा।

२

शोध की प्रथम लहरों में बड़ी जानेवाली रामप्रसाद-वृत्तों ने अपने भेदों का सहारा पाकर बहुत कुछ शक्ति प्राप्त की। आशा की वर्षा के बाद जिस तरह गुरु और श्रीलक्ष्मी अलग हो पड़ता है, वही तरह शोध-भाग में ज्ञान वाले रामप्रसाद वृत्तों का कटोर दुःख और अविन मलिन हो गया। अब वे बात बात में कहने लगे—रान, दुःख मार गया। वह हमारा जीवन ही नहीं लूटता। उसे बरबाद करने आया था।

शोध की लहरों में बड़ी जानेवाली रामप्रसाद वृत्तों ने अपने भेदों का सहारा पाकर बहुत कुछ शक्ति प्राप्त की। आशा की वर्षा के बाद जिस तरह गुरु और श्रीलक्ष्मी अलग हो पड़ता है, वही तरह शोध-भाग में ज्ञान वाले रामप्रसाद वृत्तों का कटोर दुःख और अविन मलिन हो गया। अब वे बात बात में कहने लगे—रान, दुःख मार गया। वह हमारा जीवन ही नहीं लूटता। उसे बरबाद करने आया था।



कभी न भूलता था। उसके आखिरी शब्द—“प्रिये पार्वती—” आज भी उसके कानों में गूँज रहे थे। उस कातर भाव की शब्द-हीन भाषा का ममै भी उसने ठीक-ठीक समझ लिया था। चाचा-चाची का कठोर स्वभाव और पार्वती के मायके की शोचनीय अवस्था ही उस कातर भाव का प्रधान उपादान थी।

पार्वती-हिन्दी-मिडिल पास थी। राधाचरण ने बड़े आग्रह से उसे अंग्रेजी भी पढ़ाई थी। उसका विचार था कि वह उससे मैट्रिक परीक्षा दिलावेगा; किन्तु उसकी अकाल मृत्यु ने, बहुत सी अन्य बातों के साथ, इस विचार को भी कार्य में परिणत न होने दिया।

पति की मृत्यु के बाद अभागिन पार्वती को पुस्तक छूने का अवसर ही न मिलता था, पर मैं उसकी कोई सत्ता ही न थी। सास राधाचरण की मृत्यु का कारण उसे ही समझती थी। पार्वती अन्न पीमती है, चौका-बरतन करती है, भोजन बनाती है; किन्तु फिर भी मास-मसुर की महानुभूति का पात्र नहीं बनती। फिर भी उनके मुँह से कभी मोठी बात नहीं सुनती, सुनती है कर्बदारी का कारण, अपने दुर्भाग्य की गाथा और कभी-कभी गूढ़ प्रेम के परदे में पति की निन्दा।

पार्वती को कुटिलता-पूर्ण संसार में महानुभूति का चिह्न कही दिखाई न देता था। उसके एक चचेरा भाई था, वह कही चपरामी था, पर था विवाहित। इर्मलिन गरीबी के मेवे—सन्तान की बहुतायत—से माला-माला था। अत्यन्त गर्मी पड़ने के बाद वर्षा होती है। बहुत तप चुकने पर चराधान जल की



ने निरसन्देह उनकी मानसिक कल्पना को बहुत कुछ दूर कर दिया ।

काल-भगवान् किसी की उपेक्षा नहीं करते । सूर्य के रथ का घुरा कभी नहीं टूटता । काल-भगवान् के प्रधान सहचर सूर्यदेव सुखी, दुखी—सभी—को पीछे छोड़ते हुए रथ बढ़ाये चले ही जाते हैं । शनिरचर की रात को मुखदयाल—दैन्य और दारिद्र्य की मूर्ति मुखदयाल—आ गया । बहन को गले लगाकर वह बहुत रोया । दूसरे दिन प्रातःकाल की ट्रेन से वह पार्वती को लेकर घर को रवाना हो गया ।

पार्वती ने चलते समय केवल अपने पति की पुस्तकों का एक ढ़ाँड अपने साथ लिया । बाकी न कोई खेपरा और न दो धोतियों को छोड़ कर कोई कपड़ा । भरा हुआ घर, जो उसके लिए पहले ही खाली हो चुका था, उसने भी त्यागी कर दिया । चलते समय सास ने ऊपरी मन से अल्द आने के लिए कहा और श्री-जन-मुलभ अभ्युत्थान का परिहास भी दिखाया । पार्वती ने निष्कण्ट मन से जिस समय साम के चरण हुए, उस समय गरम-गरम आतुओं की कुछ बूंदों ने भी हरदेवी के चरण छूने में उसके माथ प्रतियोगिता डी ।

( ५ )

पार्वती के आने में मुखदयाल को गरीबों का—पर पैतृक और इमानित पक्का—पर स्वर्ग बन गया । उसका बालक, जो निर्दलता के कारण जिला न था मरने व चला पार्वती से पटन के मुखदयाल का बड़ा बड़की जान्ति उसने हिन्दी-



गई थी ।

चार वर्ष और बीने, पार्वती ने ग्राइवेट तौर पर पहली कक्षा में बी० ए० पास किया । रायपुर के कलेक्टर की पत्नी ने अपने हाथ से पार्वती की सफेद साड़ी पर प्रतिष्ठा-सूचक मेहल लगाया । हिन्दू-गवर्ने-स्कूल की प्रधान शिक्षयित्री (मैडी प्रिन्सिपल ) के पद पर—त्रिसुकी शोभा, उपयुक्त हिन्दू-पंडिता के न मिलने के कारण अब तक क्रिश्चियन सेडियां पढ़ाती रही थी—पंडिता पार्वती का धरण किया गया । शहर भर में पार्वती का यशोगान होने लगा । येतन भी एकदम २५०) हो गया ।

( ५ )

रविवार का दिन था, स्कूल के बड़े बसरे में प्रबन्धकारिणी समिति के सभ्यों की अन्तरङ्ग-सभा हो रही थी । मेम्बर सभी स्त्रियां थी । राय रामकिशोर बहादुर की पत्नी, जो स्कूल की ऑनरेरी सैक्रेट्री थी, प्रबन्ध-सम्बन्धी अनेक विषय पेश कर रही थी । रायबहादुर की पत्नी ने कहा—अब मैं आज की बैठक का अन्तिम विषय अर्थात् स्कूल के चपरामी के लिए आवे हुए प्रार्थनापत्र पेश करती हूं । मेरी सम्मति में जिन लोगों के प्रार्थनापत्र हैं, उन्हें बिना देम्ये नौकर रखना ठीक न होगा । चपरामी बूढ़ा तो होगा ही; पर साथ ही साथ चिडचिड़ा या अधिक कमथोर भी न होना चाहिए और यह ऐसी बात है जो बिना देम्ये ठीक नहीं हो सकती । अब मैं इस विषय में आप की या बार्ड जी की ( मतनब या प्रिन्सिपल पार्वती से ) जैसी आज्ञा हो, वैसा करूँ ।





इसलिए किसी भी नौकर की नियुक्ति के विषय में बहुत माव-धानता से काम लेना पड़ता है। स्कूल भर में केवल चरगमों का काम ही बड़े मर्द के मपुरे था, बाकी सब कामों पर भिरवा ही नियुक्त थी।

दस बजते बजते लेडी-प्रिंसिपल की गाड़ी स्कूल के दरवाजे में पहुंच गई। विभिन्न कक्षाओं की विभिन्न पंक्तियों में खड़ी बालिकाओं ने बड़ी धड़ा में प्रधानाध्यापिका को प्रणाम किया। गाड़ी से उतर कर वे सीधी आक्रिस में पहुंची। रायबहादुर की पत्नी वहां पहले ही से उपस्थित थी। प्रिंसिपल के पहुंचने पर दामी ने घाड़ी-घाड़ी ने उन चारों आदमियों को पुलाया।

पहले आदमी को देखते ही पार्वती के विस्मय का ठिकाना न रहा। वह बूढ़ा आदमी और कोई न था—अभागा रामप्रसाद। उसे देखकर परिहृता पार्वती के हृदय में कुछ भर के लिए लज्जा का उदय हुआ। किन्तु तत्काल ही उन्होंने अपने को संभाल लिया।

सौ मील की दूरी पर आठ रुपये की नौकरी के लिए वह क्यों आया है ? मालूम होता है, उसकी सम्पत्ति और मज्दान बाहुकार पड़ोसी सूदखोर की विशाल तोंद में समा गए हैं। रामप्रसाद के मलिन और चिंतित मुख को देखकर कर्ण-हृदय पार्वती के मन का अन्तस्त्वल नक हिल गया। उसने दूसरी तरफ की मुह करके अनमने भाव से सन्देह निवारण के लिए पूछा—आपका नाम ?

रामप्रसाद पाटे ।



इसलिए किसी भी नौकर की नियुक्ति के विषय में बहुत सावधानता से काम लेना पड़ता है। स्कूल भर में केवल बरगानों का काम ही बड़े मर्दे के सपुर्दे था, बाकी सब कामों पर गिरा ही नियुक्त थी।

दस बजने बजने भेड़ी-विमिषल की गाड़ी स्कूल के दरवाजे में पहुँच गई। विभिन्न कक्षाओं की विभिन्न बक्तियों में सभी बालिकाओं ने बड़ी भद्रा से प्रधानाध्यापिका को प्रणाम दिया। गाड़ी में चार दरबे मौखी आदिम में पहुँची। रायबहादुर की पत्नी वहाँ पहुँचे ही से उपस्थित थी। विमिषल के पहुँचने पर दामि ने बारी-बारी से उन चारों आदमियों को पुकारा।

पहले आदमी को देखते ही पार्वती के विस्मय का ठिकना न रहा। वह बूढ़ा आदमी और कोई न था—अन्ना रामप्रसाद। उसे देखकर पण्डित पार्वती के हृदय में कुछ भर के लिए आश्चर्य का उदय हुआ। किन्तु तत्काल ही उन्होंने अपने को संभार लिया।

मौ मौल की दुर्गि पर आठ रुपये की मौकरी के लिए वह क्यों आया है ? मायूस होता है, उसकी सम्पत्ति और सन्तान वादुकार पढ़ाया मृत्युकार की विनाश लोह में समा गई है। रामप्रसाद के मायल और विविध सुख का देखकर करत-हृदय रहता है मन का आनन्द नष्ट हो चुका है। उसने कहा कि वह नष्ट हो चुका है।







## पिंजरा

शान्ति ने ऊबकर कारागृह के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और उठ कर अनमन-सी कमरे में घूमने लगी। उसका मन स्वस्थ नहीं था, लिखते-लिखते उसका ध्यान बँट जाता था। केवल चार पंक्तियाँ यह लिखना चाहती थी उससे लिखा न जाता था। भाषावेश में कुछ का कुछ लिख जाती थी। छः पत्र यह फड़ चुकी थी, यह सातवाँ था।

घूमते-घूमते, यह चुपचाप सिड़की में जा खड़ी हुई। सन्ध्या का सूरज दूर पश्चिम में डूब रहा था। माली ने क्यारियों में पानी छोड़ दिया था और दिन-भर के मुरमाये फूल जैसे जीवन-दान पाकर खिल उठे थे। हल्की-हल्की ठंडी हवा चलने लगी थी। शान्ति ने दूर सूरज की ओर निगाह दौड़ाई—पीली-पीली सुनहरी किरणें जैसे दूबने से पहले उन छोटे-छोटे पत्तों के तेल में जी भर दिरमा ले लेना चाहती थी जो मामने के मैदान की हरी-भरी घास पर उन्मुक्त खेल रहे थे। सड़क पर दो कमीन मुश्कियाँ, हँसती, चुहल करती, उधलनी, कूदती चली जा रही थी। शान्ति ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ा और फिर मुड़कर उसने अपने इर्द-गिर्द एक पक्षी हुई निगाह दौड़ाई—छत पर बड़ा पंखा धीमी आवाज से अनवरत चल रहा था। दरवाजों पर भारी पट्टे हिल रहे थे और भारी सौच ओग उन पर रखे





हाइकी मुस्कुरा रही थी, और उसकी आंखों में विचित्र-सी चमक थी।

क्या जान दे—जैसे आँखों ही आँखों में सान्नि ने झोंप  
मे पड़ा ।

तनिक मुग्धराने हुए लक्ष्मी ने प्रार्थना की—पीसीजी !  
पानी सेना है ।

हमारा गन्ध भंगी जमागों के लिए नहीं ।

इस भंगी है न यमारा

कि.द.कीन हो ?

मैं, बीपीजी, मामने के पुजारी की लक्ष्मी - ।

लेकिन शांति ने आगे न गुना था। उसे लड़की से बातें करने करने पिन आती थी। धोती के छोर से पानी ग्योअर करने पेंक थी।

[illegible]



शान्ति ने फिर कहा—हमारी अपनी गली में कई लोग बीमार हो गये हैं। परसों टेंडी चमार का लड़का निमोनिया से मर गया।

तभी शाल में लिपटा-लिपटा बच्चा हल्के-हल्के दो बार हांसा और शान्ति ने उसे और भी अच्छी तरह शाल में लपेट लिया।

उसकी बात को सुनी-अनसुनी करके उसके पति ने कहा—आज बेहद बदनरहेखी की है, पेट में सख्त गड़बड़ी हो रही है।

+ + +

पर आकर शान्ति ने जब लड़के को चारपाई पर लिटाया और मस्तक पर हाथ फेरने हुए कमरे वालों को पिछली तरफ किया तो वह चीक कर पीछे हटी। उसने डरी हुई निगाहों में अपने पति की ओर देखा। वे सिर को हाथों से ढकाये नाली पर बैठे थे।

बच्चा का माथा तो लवे की तरह तप रहा है—उमने बड़ी बटिनाई में गले को अचानक अवरुद्ध कर देनेवाली किसी चीज को बरधम रोक कर कहा।

लेकिन उसके पति को के हूँ।

शान्ति का कण्ठ अवरुद्ध-सा होने लगा था और उसकी आंखें मर-सी आई थीं, पर अपने पति को के करने देखा बच्चे का श्वास श्वास बढ़ उनकी और भागा पानी लाकर उनको कुत्रा कराया। निदान म न कर व चारपाई पर पड़ गये पर कुछ ही क्षण बाद उन्हें मर जाना हुआ।



शान्ति को मान्य भी न हुआ कि वह कब घर जाती है, कब घर वालों को खाना खिलाती है या खाना दे या मिठाई खाना भी दे या नहीं। उसने तो जब देखा उसे छाया की भाँति बच्चे के पास पाया। कई दिन तक तक ही जून खाकर गोमती ने बच्चे की देख-भाल की थी।

+

+

+

दोपहर का समय था, उसके पति दूजान पर गये हुए थे। उम्मी को भी अब आराम था और वह उसकी गोद से लगा सोया पड़ा था और उसके पास ही करीब पर टाट बिछाये, गोमती पुराने ऊन के धागों से स्वेटर बुनना सीख रही थी। इतने दिनों की थकी-हारी उनीची शान्ति की पलकें धीरे-धीरे बन्द हो रही थी। वह उन्हें खोलती थी पर वे फिर बन्द हो जाती थी। आखिर वह वैसे ही पड़ी-पड़ी सो गई। जब वह फिर उठी तो उसने देखा, उम्मी रो रहा है, और गोमती उसे बड़े प्यार से मुरीली आवाज में थपक-थपक कर लोरी दे रही है। शान्ति ने फिर आँखें बन्द कर लीं। उसने सुना—गोमती धीमे-धीमे स्वर से गा रही थी—

आ री कको, जा री कको, जहल पको बेर  
भरया हाथे देला, चिड़ैया उडे जा।

और फिर

आ री चिड़ैया। दो पापड़ा पमाण जा  
भरया हाथे देला चिड़ैया उडे जा।

बधा खुप कर गया था। लोरी समाप्त करके उसने बच्चे



बिजली का बंटन दयाते हुए उन्होंने कहा—यहां अंधेरे में क्यों पड़ी हो। उठो बाहर बारा में घूमो-फिरो और फिर पोले—इन्द्रानी का प्रेन आया था कि बहिन यदि चाहें तो आज मिनेमा देखा जाय।

बहिन—दिल ही दिल में विषाद से शांति मुकराई और उसके सामने एक ओर काली-कल्टी-मी लड़की का चित्र भिज गया जिसे कभी उसने बहिन कहा था। किन्तु प्रकट उसने केवल इतना कहा—मेरी लकीरें ठीक नहीं !

मुंह पुलाए हुए ला० दीनदयाल बाहर चले गये।

तब आँगों को फिर एक बार पोंझ कर और तनिक स्वस्थ होकर, शांति मंच के वाम आई और कुर्मी पर बैठ, पैर अपनी ओर को निमका, कलम उठा कर उसने लिखा—

बहिन गोमती,

मुम्हारी बहिन अब बड़ी बन गई है। बड़े आदमी की बीबी है। बड़े आदमियों की बीवियां अब उसकी बहनें हैं। विजरे में बन्द पड़ी को क्या इजाजत होती है कि स्वच्छन्द, स्वतन्त्र बिटार करने वाले अपने हमजोशियों से मिले ? मैंने तुम्हें कल फिर आने के लिए कहा था, पर अब मुम कल आना। अपनी इस बन्दिनी बहिन को भूलने की कोशिश करना।

शांति

इस बार उसने एक पाँच भा नदी काटा और न बागवत हो पाया। हा, एक बार निम्नलिखित लिखन फिर आया पर आने में भी वह-ही आमुर्ती का बर पत्र पर अनायास ही गिर पड़ी









एक प्रेस में नौकरी करता था, ७५) मासिक वेतन पाता था। घर में एक बूढ़ो मां को छोड़ कर और कोई न था। बिहार के रहने वाले थे। कुछ ही दिनों से यू० पी० में आये थे। परदा के बड़े पक्षपाती और पुरानी रूढ़ियों के कायल थे। नाम था विश्वमोहन। जब तिवारी जी ने विश्वमोहन और उनके घर को देखा तो उनकी सुरी का ठिकाना न रहा। विश्वमोहन बाबू पूरे साहच देख पड़ते थे। उनके घर में खिड़की और दरवाजों पर पिक्के पड़ी हुई थी। खमीन पर एक बड़ी दरी पड़ी थी जिसके बीच में एक गोल मेख थी। मेख के आस-पास कई कुर्सियां पड़ी थी। जब विश्वमोहन ने तिवारी जी से चाय पीने का आग्रह किया और तिवारी जी को उनके आग्रह से चाय पीना ही पड़ा तो बहा का साज-सामान देखकर तिवारी जी शक्ति हो गये। हर्ष से उनकी आँखें बमक उठी। सुंदर-सुंदर प्यालों में मेख पर चाय पीने का तिवारी जी के जीवन में पहला ही अवसर था। मेख पर चाय पीने के बाद तिवारी जी ने दो गिप्पी बरीशा मे देकर शादी पक्की कर ली। रास्ते में नारायण बोला—कहो तिवारीजी, है न लड़का हजारों में एक ? है कोई तुम्हारे गांव में ऐसा ? जब कपड़े पहन कर हँट लगा कर निकलना है तब कोई नहीं कह सकता कि साहच नहीं है। सब लोग झुक कर सलाम करने हैं। घर में देखा ? कितना परदा है। सब खिड़की दरवाजों पर पिक्के पड़ी हैं। इनकी मां बूढ़ी हो गई हैं। पर क्या मजाल कि कोई परछाई भी देख ले। दोनों समय चाय पीते हैं, कुर्सियों पर बैठते हैं।



पहुँचने पर जब वह एक कोठरी में बन्द कर दी गई और बाहर की साफ हवा उसे दुर्लभ हो गई तो उसे समुराल का जीवन बड़ा ही कष्टमय मालूम हुआ। अब उसे गहने कपड़े न मुझे थे। रह-रहकर कोठरी के बाहर निकलकर साफ हवा में आने के लिए उसका जो तड़पने लगा। स्वच्छन्द हवा में विचरने-वाली सुलसुल की जो दशा पिछरे में बन्द होने के बाद होती है वही दशा मोना की थी। चार ही छे दिन में उसके गुलाबी गाल पीले पड़ गये, आँखें भारी रहने लगी। एक दिन विश्वमोहन आफिस चले गये थे, साम सो रही थी, मोना आंगन के बाहर दरवाजे के पास चली आई। चिक को खरा हटाकर बाहर देखा। यहाँ देहाव की सुन्दरता को न थी फिर भी साफ हवा अवश्य थी। इतने दिनों के बाद सखभर के ही लिए क्यों न हो बाहर की हवा लगते ही सोना का चित्त प्रवृत्ति हो गया किन्तु उस समय एक मुद्रिया बधर से निकली। सोना को उसने चिक के पाम देख लिया। आकर विश्वमोहन की माँ से उसने वहाँ—बहू को खरा सम्हालकर रखा करो। न साल, न छ महीने अभी से लड़ी होके बाहर भाकती है। यह लच्छन कुर्तान पर की बहू-बेटियों को शोभा नहीं देत। बिम्बु की अम्मा। तुम्हारी इतनी उमर हो गई आज तक किसी ने परछाई तक नहीं देखी और तुम्हारी ही बहू के ये लच्छन। कलतुग इमा को कहने हैं।

मुद्रिया तो उपदेश देकर चली गई पर मोना को उस दिन बड़ी डाट पड़ी। उसकी समझ में न आता था कि चिक के पाम जाकर उमर और ना अरगाह कर जाता। फिर माँ बेचारी ने



घर का सारा भार सोना को सौंपकर सोना की सास ने घर-गृहस्थी से छुट्टी ले ली। कभी घर का काम करने का अभ्यास न होने के कारण सोना को घर के काम करने में षड़ी दिक्कत होती, इसके लिए उसे रोख माम की झिड़कियाँ सहनी पड़ती। सोना ने तो खेलना खाना और तिसली की तरह बड़ना ही सीखा था। गृहस्थी की गाड़ी में उसे भी कभी जुनना पड़ेगा, यह तो उसने कभी सोचा ही न था। किन्तु यह कठिनाता महीने-पन्द्रह दिन की ही थी। अभ्यास हो जाने पर फिर सोना को काम करने में कुछ कठिनाई न पड़ती।

घर में रात-दिन बन्द रहने की उसकी आदत न थी। बाहर जाने के लिए उसका जी मदा व्याकुल रहता। यदि कभी पिलौनेवालों की आवाज सुनती या “चना जोर गरम”, की आवाज उसके कानों में पड़ती तब वह नकप-सी जाती। अपना यह कैदखाने का जीवन उसे बड़ा कष्टप्रद मालूम पड़ता। किन्तु सोना बहुत जितना तब अपने को न राक सकी। वह माम और पति की आज्ञा बचाकर गृह कार्य के पञ्चान् कभी झिड़की, कभी दरवाज के पास, जब जैमा मीठा मिलना, जाकर गड़ा हो जाती। शहर का शरय, हो-हो पेड़ और पनिया देखकर उसे कुछ शान्ति मिलना। शहर की ठंडी हवा को स्पर्श करके उसमें जैम कुछ जीवन आ जाता। वह जानना थी कि झिड़की दरवाज के पास, वह कभी किसी बुरे उद्देश्य से नहीं जाती फिर भी पति नागरद हागे, माम झिड़किया लगावगा, इसलिए वह सदा उनकी नजर बचाकर ही यह काम करना।





धीरे-धीरे इसकी चर्चा विश्वमोहन के कानों तक पहुँची। इन सब बातों को रोकने के लिए उन्होंने अपनी माँ की उपस्थिति आवश्यक समझी। इसलिए माँ को बुलवा भेजा। साथ ही मोना को भी समझा दिया कि वह बहुत मन्मथलकर रहा करे। सास के आने पर मोना के ऊपर फिर से पहरा बैठ गया। किन्तु वह सो गाँव की लड़की थी, सास हवा में बिचर चुकी थी। उसके लिए सख्त परदे में बिलकुल बन्द होकर रहना पड़ा कठिन था। इसलिए उसका जीवन बड़ा दुःखी था। उससे घर के भीतर बैठा ही न जाता था। जरा मौका पाते ही बाहर सास हवा में जाने के लिए उसका जो मचल उठता और वह अपने आप को रोक न सकती। विश्वमोहन ने एकान्त में उसे कई बार समझाया कि मोना के इस आचरण से उनकी बहुत बदनामी हो रही है, इसलिए वह गिरिदकी दरवाजों के पास न जाया करे और बाहर न निकला करे। एक दो दिन तक वो उनकी बातें खाद रहती। किन्तु वह फिर भूल जाती और वही हाल फिर हो जाता। जब फिर गिरिदकी दरवाजों के पास जाती तब बाहर की सास हवा में जाने के लिए, प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को देखने के लिए उसका आगे मचल उठती।

एक दिन विश्वमोहन को क्रिमा काम से शहर के बाहर जाना था। मोना न पान का सामान ठीक कर उन्हें स्टेशन खाना दिया। सास खाना खा चुकने के बाद लेट गई। मोना ने अपने गृहस्था के काम बन्धे समाप्त करके रुखी चोटा की, कपड़े बदले, पान बना के खाया, फिर एक पुस्तक लेकर पढ़ने के लिए



घटन टाककर, पुर्ना कैजू को देकर वह अन्दर आई। मोना ने स्थान में भी न सोचा था कि यह ज़रा-सी बात यहाँ तक पहुँच आयगी। पनि का चेहरा देखकर वह सहम-सी गई। उनकी गोदियाँ चढ़ी हुई, चेहरा खाल और आँखें बुझ गीली थीं। मोना अन्दर आई। विश्वमोहन ने उसकी तरफ आँख उठाकर भी न देखा। उसने धरते-धरते पनि से पूछा—कैसे लौट आये ? विश्वमोहन ने दयाई से दो शब्दों में उत्तर दिया—भागी भेट है।

मोना ने फिर पूछा—अब क्या आओगे ?

विश्वमोहन ने एक तीव्र दृष्टि पत्नी पर डाली और कठोर स्वर में बोले—भागी तीन घण्टे बाद आयगी तब ज़रा ब्रॉडगा। मोना फिर मथना में बोली—तो इस प्रकार बैठे क्या तक रहोगे ? मैं लाट बिदाये देती हूँ आराम से झट आओ।

कुछ देर करने की कोई आवश्यकता नहीं, मैं बहुत अच्छी तरह हूँ, विश्वमोहन ने वह स्वर में दयाई से कहा। मनाह वह बहुत आसह करने पर विश्वमोहन ने कमरे में घेर रखा, न वह पूछ बोले और न लाट ही पर बैठे, कुर्सी पर बैठ गए। एक घन्टा उठाकर उसने पल्ले उलटने लगे। पाने के नाम से कहाँ-कहाँ एक अन्न भी न वह मचें हों किन्तु इस प्रकार व अन्नी अन्न-ईदना का गुणचार बहुत ही घट की तरह की रहेंगे। मोना का आचरण कई हप्ता-हप्ता विश्वमोहन के इत्तन की तरह ही रहा बहुत ही घट की अन्नी-ईद वरना मनाह से दिया न वह वह हरा विश्वमोहन उनसे पास बैठे



आहत-अपमान से सोना तड़प उठी । वह कटे हुए वृक्ष की भाँति स्याट पर गिर पड़ी और मूर्ख रोई । रोने के बाद उसकी जी बुझ हल्का हुआ । उसे अपने गाँव का मन्दिर जीवन याद आने लगा । देहाती जीवन की सुन्दर स्मृतियाँ एक-एक करके मुझ की सुन्दर कल्पना की भाँति उसके दिमाग में आने लगी । उसे याद आया, किम प्रकार जाड़े के दिनों में अलाव के पास न जाने कितनी रात तक घुड़ते, अथान, मुक्किया और बरुचे सब एक साथ बैठकर आग तापते हुए पहेलियाँ घुमाते और रिस्से-बहानियाँ बहा करते थे । किसी के साथ किसी प्रकार का बन्धन न था । नदी पर गाव भर की बहू-बेटियाँ वैसे स्नान करने की जाती थी और फिर सब एक साथ गाना गाँ लौटती थी, कितना सुखमय जीवन था वह । चने के खेत में नर्म-नर्म खने की भाँती छोड़कर सब एक साथ ही किम प्रकार स्नाया करते थे और कभी-कभी छोना-भपटी भी हो जाता करता था । हँसी-मजाक भी मूँह होता था । किन्तु वहाँ किसी को कुछ शिक्षावत् नहीं था । अपने पड़ोसी कुन्दन के लिए वह अपनी माँ से लड़भिड़ कर माँ मिटाई ले जाता करता था । नदी पर नहाने के बाद कभी-कभी कुन्दन उसकी पोछी भी पोछा दिया करता था । किन्तु वहाँ को कभी इसकी चर्चा भी नहीं हुई । कोशिये में एक सुन्दर माँ पोल का बटुआ बनाकर सबके सामने ही तो उसने कुन्दन को दिया था, जो अब तक उसके पास रखा जाता पर वहाँ तो इस पर किसी को भी ध्यान न लगता था । वहाँ सब लोग १० मजदूरी कोलन खान करने की व्यवस्था



विकल्प मोना के मस्तिष्क में आये और चले गए ।

तीन दिन के बाद विश्वमोहन लौटे । जाने के पहिले उनमें और मोना में जो कुछ बातचीत हुई थी, वे उसे प्रायः मूल-से गये थे । मोना के लिए अच्छी भी माफ़ी, एक जोड़ी पैरों के लिए सुन्दर-भी स्लीपर और कुछ डेपर-किसम भी लिये हुए वे घर आये, किन्तु सामने चबूतरों पर उन्हें केजू बैठे मिले । पाम की हरी-हरी घाम पर वह अपना नीतर चरा रहा था । विश्वमोहन उसे देखते ही तिलमिला-से उठे, सम्प्रेह और भी गहरा हो गया । सारी बातें क्यों की क्यों ताओ हो गईं । उनका हृदय पड़ा ही विचलित और व्यथित हुआ, न जाने कितनी प्रकार की रांकारें उन्हें व्याकुल करने लगीं । उनका चेहरा फिर गंभीर हो गया । घर आकर वे मोना से एक बात भी न कर सके । मा से एक दो बातें कर, बिना भोजन किये ही वे आहिम चले गए । मोना से वह उपेक्षा न मही गई । पिछले तीन दिनों में वह गिरङ्गी दरवाजों के पाम भी न गई थी, और उसने वह निश्चय कर लिया था कि अब वह कभी भी गिरङ्गी दरवाजों के पाम न जायगी । किन्तु विश्वमोहन की इस उपेक्षा ने उसका हृदय के पाय को और भी गहरा कर दिया । मोना अब इससे अधिक न सह सकती थी, अपनी जीवन-लीला समाप्त करने का उस कोई साधन न मिला तब आगत में लगे हुए उनमें क पड़ से उसने डा लान फल नोड लिय और पीसकर खा गट । कुछ ही समय बाद मोना के पैर अकड़न लगे उसका जवान "ट गट और चटका जाता पड गया । वह देखती थी । किन्तु बाल न सकता था । इसी समय









## विचित्र मर्यद

लगभग नेरह सौ वर्ष पहले की बात है। अंग देश में सत्य-सेन नाम का राजा राज्य करता था। यह राजा आध्र वंश का था। इसके पूर्व पुरुषों ने दक्षिण में आकर अंग देश में राज्य स्थापित किया था। सत्यसेन ने चम्पा नगरी में राजधानी स्थापित करके अपने राज्य को उत्तर में मिथिला तथा मरय देश तक और दक्षिण में गंगा नदी के सुन्दर तट से कलिंग के सघन वन पर्यन्त बढ़ा लिया था।

यह समय प्रभावशाली बौद्ध धर्म और निर्वाणोन्मुख वैदिक धर्म के संघर्ष का था। इस संघर्ष का भी सम्बन्ध यह प्रभाव था कि उस समय के राजाओं को सघेरे तन्त्रा आती थी। प्रबल प्रतापी सत्यसेन रात को जागता था और दिन में सोता था। ठीक ही है, जिस समय साधारण जीव नींद लेते हैं, उस समय संयमी पुरुष जागते हैं। रौद्रमूर्ति राजा रात को तान्त्रिक बन जाता था और प्रभान में वैदिक पूजापाठ समाप्त करके ती बजे के पहले ही आर्यें मंदने लगता था। कोई कोई कहते हैं कि उस समय देश में बौद्ध धर्म के अभ्युदय का वही प्रभाव था जो अफीम के नशे का होता है।

अब तक जो बात बदन पन्थ, पत्र, जितान्त्रिक, नाथशासन, दानपत्र आदि पाए गये हैं उनमें इस बात का पता लगता है कि







कन्यागु हो ।

शब्द के होते ही उस विशाल भवन के द्वारों तंत्रपूर्ण नेत्र  
उसके ऊपर जा पड़े ।

निद्रा में एकाएक बाधा पड़ जाने से राजा मरवमेन को बड़ा  
क्रोध आया । वे बोले—यह आदमी खोर है ।

भिक्षु ने दोनों हाथ उठाकर कहा—आपका कन्यागु हो ।  
तब मंत्री ने पिता के कान में कुछ कहकर, सर्पिणी के समान  
झूठ होकर पूछा—तुम किम राज्य के प्रजाजन हो ?

भिक्षु—विषय-राज्य के ।

मंत्री—मालूम होता है तुम कोई म्हागधारी डाकू हो ।

भिक्षु—कन्यागु हो ।

मंत्री—कन्यागु कौन करेगा ?

भिक्षु—जीव अपना कन्यागु आप ही करता है ।

मंत्री—मैं तुम्हारा परामर्श रूप शृणु नहीं लेना चाहती ।

भिक्षु—मैं शृणु नहीं देता, दान करता हूँ । मैं देखता हूँ कि  
इस विशाल राज्य में शक्ति-पूजा की तैयारी हो रही है; जो  
बहुत ही घृणिन और हस्याकारी कर्म है । यह सृष्टि की  
बाल्यावस्था की अज्ञानजन्य क्रिया क अतिरिक्त और कुछ नहीं  
है । आप ज्ञान लाभ करके इसे छोड़ दें ।

प्रधान मंत्री बोला—यह कोई बौद्ध भिक्षु है । मनापति  
रुद्रनारायण ने कहा—इसकी बातें गलत पर बड़ा देना  
चाहिए ।

मंत्री बीच में जल पड़ा । उसने रुद्रांग शब्दों में कहा—





है, और वह किसी को आत्म-त्याग करना नहीं सिलता, तब तुम निश्चय ममम्हो कि एक राजा मिटकर दूसरों राजा हो जायेंगे और देश में राष्ट्रविप्लव हो जाएगा। जब धर्म की जलती हुई आग राजसिंहासन से भ्रष्ट होकर अन्य आधार ग्रहण करती है और उस महान् विप्लव के समय क्रूरता, स्नेह, पवित्रता, साम्य, शांति और प्रीति आदि सद्वर्ण नही होते, तब उसमें सब ही भस्म हो जाते हैं। इस बड़े भारी राज्य में पाप का प्रवेश हो गया है। यहाँ मर्यादा का शास्त्र और मनीष्य धर्म का मर्यादाश किया जाता है। यहाँ निःमहाय और मूक प्राणियों को बलि चढ़ाकर पाप को उकमाया जाता है। तुम्हारी मश, कालीपूजा की फिर से प्रतिष्ठा करके ये सब लोग बिना समझे यूँके घोर तामसी वृत्ति को अपनी ओर खींचने का उद्योग कर रहे हैं। तुम्हें चाहिए कि इस जीव-बलि की जगह आत्मबलि की रिश्ता देकर पूजा प्रतिष्ठा करो। यह आत्मबलि ही सच कालीपूजा है। यह बौद्ध भिक्षु भी तुम्हारी इस पूजा का प्रसाद लेकर आत्ममुष्टि करेंगे।

उक्त व्याख्यान सुनते सुनते बहुत-से लोग फिर ऊपन लगे। राजा साहब का उनमें पहला नम्बर था। मश ने कहा—यह आदमी पागल है, इसको देवदत्त पुजारी के घर में कैद करके रक्खो।

३

बूढ़ा देवदत्त पुजारी घोर शाक्त था। उसका एक बामनदास नाम का पुत्र था, जिसका उमर लगभग १२ वर्ष का था। वह एक



सेनापति—यदि भाग गया तो इसके साथ आपका यह जटाधारी मस्तक भी चला जायगा । इसलिए इसे किसी तरह अपने तन्त्र-मन्त्र-बल से बांधकर रक्खिएगा ।

सेनापति चला गया । देवदत्त ने भिज्जु की ओर देखा । उस देवदत्त सुंदर युवा की मूर्ति देखकर उसे विश्वास हो गया कि भिज्जु भाग जाने वाला व्यक्ति नहीं है । इसके बाद उसने कुछ सोचकर पुकारा—सती !

सत्यवती झरोखे में से देख रही थी । शीघ्र ही बाहर होकर नीचा सिर किये हुए बोली—कहिए, क्या आज्ञा है ?

देवदत्त—यह थोड़ा भिज्जु राजकुमारी की आज्ञा से सात दिन के लिए अपने यहां कैद रक्खा गया है । इसकी देख-रेख का भार तुम्हें सौंपा जाता है ।

सत्यवती ने हँसकर कहा—अच्छा, किंतु यदि यह भाग गया तो ?

देवदत्त—यह वामनदास के बराबर न दौड़ सकेगा । उसको खरा मेरे पास गुला लाओ ।

पिता की आज्ञा से वामनदास ने रात को पहरा देना स्वीकार किया । दिन की देख-रेख का भार सत्यवती पर रहा ।

भाई-बहन को भिज्जु की देख-रेख का भार सौंपकर देवदत्त मंत्र अपने के लिए फिर घर में चला गया और वामनदास अपने वेद-पाठ में लग गया । सत्यवती माहस करके भिज्जु के सामने खड़ी हो गई और बोली—तुम्हें मैं क्या कहकर पुकारा करूं ?

भिज्जु—कुमारी । मैं तुम्हारी हथेली देखना चाहता ॥



मकली । बस, फिर क्या था, मुँड-के-मुँड स्त्री-गुरुय देवदत्त के घर आने-जाने लगे । इसके मिथा लाला सादब कभी-कभी मौला पापर मुंदरी कुमारियों को संन्यासिनियों के घेरा में और रूपयगी बेरयागों को गृहस्थों की कन्याओं के घेरा में भी वहाँ भेजने लगे, जिससे कि किसी तरह भिक्षु पथ-भ्रष्ट हो जाय किंतु ये सब ही बातों से विकलामनोरथ लौटने लगीं । उस बौद्ध भिक्षु के अजेय रूप-दुर्ग का एक अणु भी विचलित न हुआ । लाला जी की भूटी गंग मथ हो गई । उसका असौम्य करुणामय मुख देखकर और उसकी स्नेहमयी धाणी सुनकर मे रडों का-परम बौद्धधर्म ग्रहण करने लगे ।

यह वान धीरे-धीरे राजकुमारी के कानों तक जा पहुँची।  
 कृष्ण त्रयोदशी की मंथरा को अपने सेनापति को आज्ञा दी  
 कि निशानत्रयाद को इसी समय में ही मारना लाया जाय।

[illegible][illegible]



मैं नदी और पर्वतों को भी सहज ही पार कर जाऊँगी।

सारा नगर घोर निद्रा में मग्न था। चारों ओर मन्नाटा छा रहा था। रास्तों पर एक भी मनुष्य नदी दिग्गई देता था। भिषु मरयवनी के माथ देवदत्त के घर से चल दिया।

६

राग दम चुकी थी। राजकुमारी मंडा चंपागढ़ के मिहशर को पार करके उतर गई। यह एक शोधगामी घोड़े पर सवार थी और हाथ में धनुर्बाण लिये थी। उसने कुमार नायकमिह को पुकारकर कहा—कुमार, आप अंगराग्य के पुराने मित्र हैं। इस समय आपकी मेरी एक बान माननी होगी।

कुमार नायकमिह ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—मैं आपकी आज्ञा पालन करने के लिए तैयार हूँ।

मंडा—राजधानी से बाहर जाने के कंचल दो ही रास्ते हैं। अभी घोड़ी ही बंद पड़ने लौट मिश्र कुमारी मरयवनी को लेकर आया है। यह तो नदी मामूली कि बहकिम रास्ते गया है, परन्तु गया है इन्हीं दो रास्तों में से किसी एक में। अभी चर्चा-भर पहले ही दिग्गजमात्र ने मुझे इस बान की सूचना दी है। अतएव राजा के अनुसार जन दोनों का रोचना हमारा कर्तव्य है। एक रास्ते में तो मैं दिग्गजमात्र आया था और दूसरा रास्ता मेनार्जिन को पार हाँस्यार में निकल के साथ चल गया है। अब एक रास्ता और है। आप ही मुझे बता दें कि यह रास्ता क्या है। इसीलिए मैं बाहर निकली हूँ। इस रास्ते में आप ही बाँध और बिछु ठपाने बाँध दूँगे।





भूमि सय ही कुछ देखने का अवसर मिला है । इसलिए कहता हूँ कि इस अंधेरी रात में यह कंटकमय और पथरीला रास्ता तुम जैसी अचलाचों के लिए घर का आंगन नहीं है । तुम भागने का प्रयत्न मत करो ।

कुमार नायकसिंह को अंगदेश में प्रायः सब ही जानते थे । मत्स्यवती भी उन्हें पहचान गई, इसलिए खड़ी हो गई और आँखों में आँसू भर हाथ जोड़कर बोली—कुमार, मैं अनाथ हूँ । मुझे तुम समे ही कैद कर लो, परंतु भिक्षु 'शरण मैया' को छोड़ दो ।

कुमार—उन्हें छोड़ देने का अधिकार तो मंत्री को है । हाँ, मैं तुम्हें अवश्य छोड़ सकता हूँ । छोड़ देने में कुछ दोष भी नहीं है क्योंकि तुम भागना नहीं जानती ।

पीछे से किमी ने कहा—नहीं, कभी न छोड़ना । यह रमणी मेरी प्रणयिनी है ।

लाला किसानप्रसाद ने मुख्यस्थल में अपनी बहादुरी की सीमा दिखलाने के लिए थोड़ी-सी शराब पी ली थी । आप कुछ पाम जाकर बोले—मत्स्यवती, तुम्हारा दाम तुम्हारे सामने खड़ा है ।

मत्स्यवती ने वातर म्वर से कहा—कुमार, मुझे बचाओ ।

तुम्हें बचाने की शक्ति किमी में नहीं है । कहकर लाला साहब ने मत्स्यवती का हाथ पकड़ लिया ।

कुमार नायकसिंह ने सोचा—इस समय इस विधाव की लान-पंसी में पूजा करना ही बिगड़ फलप्रद होगा, और बिना कुछ बहे-मुने उठाने बेमा हो किया ।



डाकू उठा ले गया था। इतने समय के बाद अब उसका पता लगा है। तुम मायघान रहना; भिखिला की राजकुमारी को मैं तुम्हारे ही पास छोड़े जाता हूँ।

भिखु चला गया। सत्यवती दौड़कर पास आ गई और पृथ्वी लगी—कुमार, क्या अभी तुम्हारे पास मेरे 'शरणभैया' थे ? हाय ! वे कहां चले गए ?

नायकमिह ने कहा—कुमारी सत्यवती, जिन मुझ भगवान ने तुम्हारे भाई को आश्रय दिया है, मैं भी अब उन्हीं की शरण में लौटी हूँ। तुम्हें अब कोई डर नहीं है। तुम इस समय शिलाकंदर में बैठ जाओ। मैं थोड़ा बड़ा-बड़ा चलकर दौड़ूँ, क्या हाल है।

मूमलाभार वाली बरस रहा था। अंधकार इतना गहरा था कि हाथ को हाथ नहीं गूँथना था। कुमार नायकमिह ने बिजली के प्रकाश में देखा कि मंडा पगली के समान चली जा रही है। उसके नेत्र उम गहन अंधकार को भेदकर भिखु का अनुसरण कर रहे हैं। नायकमिह को दृष्टकर स्मृत पृथा—कुमार, भिखु कहाँ गया ?

नायकमिह ने जोर से पूछा—क्या ?

मंडा—नायकमिह तुमने क्या खाक कहा है ?

नायकमिह ने कुछ देर के लिए रुक कर कहा—मैं सोच रहा हूँ कि

क्या मैं तुम्हारे साथ चलूँ या नहीं। मैं तुम्हारे साथ चलूँ तो तुम्हारे

साथ चलूँ तो तुम्हारे साथ चलूँ। मैं तुम्हारे साथ चलूँ तो तुम्हारे

साथ चलूँ तो तुम्हारे साथ चलूँ। मैं तुम्हारे साथ चलूँ तो तुम्हारे

साथ चलूँ तो तुम्हारे साथ चलूँ। मैं तुम्हारे साथ चलूँ तो तुम्हारे



अंगराज्य में शत-सहस्र धाराओं के रूप में बहे और सब के लिए शान्तिप्रद हो ।

मंत्रा ने हाथ जोड़कर कहा—जीवननाथ, आप संसार को छोड़कर न जायें । याद कीजिये, आप प्रतिज्ञाप्रद हो चुके हैं ।

भिष्णु—कौनसी प्रतिज्ञा ? मुझे तो याद नहीं आती ।

मंत्रा—देव, उस दिन आपने स्वीकार किया था कि मैं आत्मबलि देकर अंगराज्य में करुणा का संचार करूँगा । अब आप वही सत्यपाश में बंधे रहो । भिष्णु महाराज, संसार में ही रहो, इसे मत छोड़ो । आपको देख कर मैं सोखूँगी और आपको अपने हृदय-मंदिर में विराजमान कर मैं आपकी पूजा करूँगी । मुझे अब अपने धर्म की दीक्षा दो । भिष्णुराज, प्रसन्न होता है कि बौद्ध-धर्म बहुत ही अच्छा धर्म है ।

भिष्णु—कुमारी, क्या तुम मुझे संसारगृह में रखने के लिए तैयार हो ?

मंत्रा—सब तरह से । भिष्णु महोदय, अब मेरे हृदय के टुकड़े करके मत जाओ । मैं अपने प्राणों को तुम पर निष्ठावर कर चुकी हूँ ।

उस भुषनमोहन मुख से बिषादमयी वाणी को सुनकर भिष्णु उठ खड़ा हुआ । अपने पैरों में पड़ी हुई उस राजकुमारी को वह अपना शक्तिशालिनी भुजाओं से उठाकर कुटीर के बाहर ले आया ।

पूर्वांकाश में उषा की किरणें उन दोनों के मुख पर पड़कर एक अपूर्व-चित्र की रचना करने लगी ।



## बाबू अन्नपूर्णानन्द जी

हिन्दी-कहानी-साहित्य में हास्यरस का भावः अभाव-सा ही है। बहुत कम लेखक ऐसे हैं जो शिष्ट और सुखिपूर्ण हास्य-रस की अभिव्यक्ति करने में विवश हो सकें हुए हैं। बाबू अन्नपूर्णानन्द जी इन्हीं कठिण कलाकारों में से हैं जो कथा-साहित्य के इस अभाव की पूर्ति के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। भारत का जन्म-स्थान भारी है। वहीं आपने शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की और वहीं साहित्य-सेवा का कार्य कर रहे हैं। हिन्दी-क्षेत्र में प्रवेश किये आपकी कोई बहुत समय नहीं हुआ, परन्तु अपने प्रशस्त साहित्यिक प्रयत्नों के आधार पर अपने लिए आपने अच्छा स्थान बना लिया है। आपका हास्य परिष्कृत और सुखिपूर्ण होता है। उसमें प्राग्गता और अक्षोभता का सुन्दर अभाव रहता है।

आपकी कहानियों में साहित्य, राजनीति, विद्यार्थी-जीवन, शिक्षा तथा समाज की दुरवस्था आदि विषयों पर विशेष तौर पर ध्यान रहता है। उनमें विनोद की सामग्री प्रचुर रहती है।

‘मेरी हजामत’, ‘मगनरतु खोजा’, ‘महाकवि चचा’, ‘मगन-मोह’, आदि आपकी रचनाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं।





अस्तरत थी कावड़े की पर मैंने हाथ ही से अपने शरीर की घूँस टटोई ।

मैं विलगुल मस्त हो गया । घूँस की बैतरणी गार करने के बाद यह बारा स्वर्ग-भा प्रतीत हो रहा था । हृदय धीरे-धीरे आनंद की धँग मारने लगा । बारह बज गये थे, मित्रों ने रमोई नैवार कर ली होगी, मेरा इंतजार कर रहे होंगे । पता नहीं बाटियों को लोगों ने धी से तर कर रक्खा ॥ या नहीं । मैंने कह तो दिया था ।

बारा में मैं दाखिल हुआ । बीच में एक बारहदरी थी । अंजान-चौकड़ी वही ठहरी होगी । मैं उसी तरफ बढ़ा । मन में सोचना आ रहा था कि एक बार पहुँचते ही सब को सूद लगावूँगा कि दावत देने की आखिर यह कौन-सी जगह थी । रहूर में इतनी दूर और ऐसी खराब मक़द ।

लेकिन बारहदरी में कोई दिशाई न पड़ा । किमी पेड़ के नीचे सब होंगे । पिछ-निछ का मक़ा पेड़ों ही के नीचे आया है ।

मैंने मारा बाग़ छान डाला, कहीं किमी की गंध भी न थी । आश्चर्य सामना क्या है ? दूर पर एक माफ़ी बुद्ध काम करता दिशाई पड़ा । उमकें पाम आकर मैंने बुद्धा—क्यों भाई ! आज सुबह शहर में बुद्ध भोग रहा मेर क ज़िण आये थ ?

नाही नो—उमन कहा ।

अर मुग़ा नाम का कोई आदमी नहीं आया वा ? नक़्दरा बजत माइक़ा है । 'न' ११ '६ बज' था मस्त ।



कर दिया और ईश्वर भूठ न कहलाये, पंद्रह मिनट तक लगातार सब हँसते रहे ! मैं खड़ा दांत पीमना रहा ।

मुरारी ने हँसते हुए कहा—देखो, जब तक तुम हम लोगों को एक दावत न दे लोगे तब तक हम लोग तुम्हें इसी तरह बेवकूफ बनाकर छकाया करेंगे ।

किसी तरह अपना गुस्सा पीते हुए मैंने कहा—अपने घर पर तो मैं तुम लोगों को दावत दे नहीं सकता । मेरी स्त्री तुम लोगों को समाज की तलछट ममकती है ।

अच्छा ! बाहर बहो ।

राहुलगंज चलोगे ? छोटी लाइन से सीसरा स्टेशन है यहाँ से । बड़ा रमणीय स्थान है । वहाँ के स्टेशन-मास्टर मेरे मित्र हैं । दावत का नारा प्रसन्न कर रखेंगे ।

मेरी यह राय सबको पसन्द आई । कल ही वहाँ चलने की पक्की ठहरी । दूसरे दिन शाम को पाँच बजे की गाड़ी से हम लोग रवाना हुए और छः बजते-बजते राहुलगंज पहुँच गये ।

पं० नेकीराम मेरे साथ इतने आदमियों को देखकर धर्राये । उन्हें अलग से जाकर मैंने उनसे कुछ बातें की । ये हँस कर चुप हो रहे । मैंने पूछा—आप कल सुबह जा रहे हैं ?

कल सुबह नहीं बल्कि आज ही रात में तीन बजे की गाड़ी से । मेरे रिलीफ \* आ गये हैं । कल से मेरी छुट्टी शुरू होगी ।

इधर मुरारी और मोहन में यह बहस हो रही थी कि आमन

\* स्थानापन्न कार्यकर्ता ।



दुर्लभ देखी हैं ? ठीक उसी तरह की चार आंखें टंकी के ऊपर से मेरी ओर आग फेंक रही थी ।

म्याना खतम करके मैं वहाँ से चलने लगा। चलने हुए मैंने कहा—ऊपर एक थड़ा पानी मैंने रखवा दिया है। खाली पेट ठंडा जल पीना, आयुर्वेद में त्रिदोषनाराक माना गया है।

धोड़ी दूर जाकर मैं फिर सोटा। एक घान मैं भूम गया था। मैंने कहा—हा, एक बात और। पं० नेकीराम ने कहा कि रात में अगर किसी ने शोर किया तो वे पुलिस को खबर दे देंगे कि कुछ बाहरी लोग बिना इजाजत स्टेशन की टंकी पर चढ़ गये हैं और ऊपस मचा रहे हैं।

मुन्दारा नाश हो—मुगरी और मोहन ने कहा ।

गुह्यार्ग मत्पानारा हो—गुरस्ती और माधो ने कहा ।

ग्यारह बज गये थे। स्टेशन पर आकर मैं बैठ रहा।  
राष्ट्रमार्गज मध्य लाइन का एक स्टेशन है। रात में गाढ़िया नहीं  
आती जानी। स्टेशन पर इमारतें गाढ़िया थीं।

मुषह साहिं नान वर की गाढ़ा मेरी, नारायण स्थाना हो  
गये। मैं भी उगा गाढ़ा मे स्थाना हुआ। उदितता न नय भ्रंश-  
भाभर मे ना गलर भित्तु, चलन ममय कह दिया कि उनके  
महामान। नान वर की गाढ़ा मेरी, नारायण स्थाना हो  
गये। मैं भी उगा गाढ़ा मे स्थाना हुआ। उदितता न नय भ्रंश-

$\frac{d}{dt} \left( \frac{\partial L}{\partial \dot{x}} \right) = \frac{\partial L}{\partial x}$



से पूछता है—तो फिर मित्री और छोटी कैसे जाएंगी ? वे कहती हैं—हम वहां सिलौने लेंगी—कपड़े लेंगी—कह कर वह बुढ़िया की ओर बड़ी उत्सुकता से देखता है। वह चुप रहती है। उससे लड़के का कौतूहल बढ़ता है। यह फिर पूछता है—तो क्यों दादी, सचमुच वहां सिलौने मिलते हैं।

मिलते होंगे बेटा !—उसकी उत्सुकता से वह निराश हो रही है। उसके मन में एक अस्पष्ट चित्र उद्भूत हो रहा है। वह स्तब्ध कर बोलती है—वहां बड़ी भीड़ होती है, जाड़े की इस रात में वहां सब नहाते हैं, बस और सुख नहीं होता। वह अपना विरोध प्रकट करने के लिए एक दीर्घ श्वास छोड़ कर चुप हो जाती है।

लड़के का आश्चर्य और बढ़ जाता है। वह और आतुरता से पूछता है—बड़ी भीड़ होती है ?

और क्या !—वह जोश से भर कर कहती है—वेसी भीड़ होती है, कि कितने दब जाते हैं ! एक दूसरे पर गिर कर मर जाते हैं ! और बेटा, एक दूसरे से छूट कर उस भीड़ में भूल जाते हैं !—बुढ़िया की आंखों में आंसू भर आते हैं, वह भरे हुए कंठ से कहती है—फिर भला हम वहां कहां जाएंगे ? मेरे बच्चे, तू मेरी गोद से छूट जायगा। तुम्हें कैसे संभालूंगी ?—वह उसे गोद में उठा लेती है, चूमती है। उसकी आंखों में आंसू की दो बूंदें बालक के गिर पर गिर जाती हैं। वह उसे अपने आलिंगन में चिपटा लेती है।

बालक के चिपकने से उसके प्रेम में उछाल आ रहा है। वह









उसी समय राहुर चलने की तैयारी हो गई है। लाल, पीली और काली घुड़ियों की आदरें छोड़े उन औरतों का गरोह, जेमे गंग-विरंगी तिलियों के झुण्ड हैं। उनके पीछे मुद्रिया भी किमी मूखे घुस के ठूँड की तरह लागी है, जिसे छोड़ कर वे उड़ी जा रही हैं। उनकी आंखें विस्मय से विमुग्ध हैं, नगर उनके लिए अलौकिक सत्ता है जिसको उनकी कल्पना इन्द्रलोक बना देती है। बच्चे और भी प्रसन्न हैं। घोड़ा, गाड़ी, मोटर और माइकिलें—इनकी पों-पों और टुन-टुन कितने सशय हैं। यह उल्लस रहे हैं ! मोटर से कीचड़ उल्लस कर पड़ने पर भी मच ईस रहे हैं ! केमा अच्छा यह उनका आश्रय और भाग्य है !

बाजार में पहुँचकर खरीदारी शुरू हो गई है । वह  
बुद्ध भण्ड, बुद्ध भण्ड दुकानों पर हो रही है । बाहर की  
बीचों, अन्न बीजों हो रही हैं । बच्चे अलग अपने  
मन की चीजें देख कर रोते रोते हैं । तब तक वह  
बच्चा बिजाना है—देख-देख कर मेरी टोपी !—उसकी सुनने  
गलों में बसबस बसबस की हुई टोपी है ।

बुद्धिवादी की गोद में लक्ष्मी अर्पित हो गया है। उनकी  
आँखों में आँसू भर आये हैं। वह दासी की गोद में शूद्र स्त्री  
के देखना है, मरने के बाद नहीं जानना है। दासी के मुँह  
से पीड़ा की वह त्रिभुज निकलना है। ईश्वर के वह अपनी आँखों  
से दृष्टि करनी चाहते हैं। वह अपने मन में कहते हैं—  
हमारे दासों की गोद में लक्ष्मी अर्पित हो गई है।  
हमारे दासों की गोद में लक्ष्मी अर्पित हो गई है।  
हमारे दासों की गोद में लक्ष्मी अर्पित हो गई है।

दादी देखती है। एक आदमी लाल-हरी कानून की  
 धी धतूरी-सी लिये गया है। वह रह-रह कर योल  
 ले लो, ये लाल-हरी टोपियां, तीन-तीन पैने में। दुर्दि  
 तुन जैसे इत्साह में आ गई है। वह उसे ले रही है। द  
 हो रहा है। दादी ने अपनी छोटी-सी गांठ गाली कर  
 उसे टोपी पहना कर वह जैसे उसमें अधिक पा गई है  
 अधिक लाभ में जैसे प्रसन्न है। वह चुप है। आनन्द-  
 है। वह केवल प्रसन्न दृष्टि में उसे देख रही है, वधा जैसे  
 है। वह जैसे आज उनका नहीं है। यह दूर से—दृष्ट  
 प्यार करने पर, आज उसका मनकर आया है। ऐसा  
 वह अविचल मुन न सोनेगी। केवल अभी दृष्टि भर  
 ले। वह उसे प्रसन्न कर रही है। यह गर्व-मग्न है।

यह ऐसा मय का गला है। अभिमान में भरा है  
 वह बिनी की स्त्रो नही देख रहा है। वह अपनी कान  
 टोपी लगाता है, उतारता है, देखता है, हानी में बिपका  
 है मग्न है। वह अपने में प्रसन्न हो रहा है। यह लान  
 टोपी हमारी कानों को रसीन कर रही है। रोशनी के प्रका  
 हमारे कपड़ों का रंगन कर रही है। वह देखता नहीं है,  
 मुन का भाव नहीं कर रही है। वह ऐसा ही प्रसन्न है,  
 यह अपने में ही प्रसन्न है। हमारा ही स्त्रो हम कर रहा है  
 का म दृष्टि में प्रसन्न है।

सो भी नहीं सकती। वह शिथिल होकर और भी अवसाद में बही जा रही है। दवा नहीं चल रही है, फिर भी पीपल के पत्ते पत्ते हिल रहे हैं—चमक रहे हैं। उनका शीतल स्पर्श उसके मन को कंपा जाता है।

बच्चे की देह जलते लगे-सी लाल है। सम्पूर्ण शरीर में लून के रंग जैसे पड़े हैं। वह अपने अवसाद की दौड़ में शिथिल हो गया है। वह वहाँ से बढ़ भी नहीं पाता है। दाढ़ी वैसे जकड़े हुए पड़ी है। इसी से जैसे स्तोभ में अवसन्न है। उसके हृदय पर वह घम्भन जैसे पहाड़ बन कर भार दे रहा है। यह ऊब रहा है। एक कापती आवाज निकलती है—दाँ...दी !

हा—यह आह भर कर कहती है—क्या है लाल !—यह अपने गीले कपड़ों के घेरे के भीतर झाँक कर बड़े कातर स्नेह से उसे देखने लगती है।

बच्चे को जैसे सहारा मिल जाता है। वह अपनी मन की गाँठ खोल कर धीरे से कहता है—मेरी अच्छी टोपी, दादी !—उमने अपनी टोपी सिर पर दबा ली है।

शुद्धिया के मुँह से 'हाँ' भी नहीं निकल पाता है। उसका हृदय जैसे चिर गया है। बालक के कानों हो रहे ठोठों पर बिगरी हँसी उसके कलेजे में और भी तीर बन कर धंस गई है। वह दली पीड़ा में एक क्षण उसे देखती है, फिर कतार में केवल मिर दिला देती है, और भी जकड़ कर उसे अपनी गोद में लिपा लेती है।

मुड़िया अपने लान्त शरीर में धँसुप पड़ी है। उनकी पीड़ा में एक ही कल्पना सिसक रही है—मेरी अच्छी टोपी...  
...! अभी दो क्षण पहले की देखी, सिकुड़ी घुले हुए रंग की पिचकी-पिचकी टोपी, पहले-सी नई बन कर उसके भावों में रंग भर रही है। सचमुच वह उसी नदी में पड़ी है। उसके हाड़ों की ठंडी को पवन हिला देता है। वह जाग जाती है। फिर भी धुँचे की प्रसन्नता की निधि, वह लाल-हरी टोपी, उसे ढंक लेती है।

धुँचे का प्यार लुट गया है, इसी से वह लुट गई है। वह पीड़ा में डूब गया है, इसी से वह डूब गई है! वह बेहाल है, अशक्त है, असहाय है, मौन है, जल रहा है—कांप रहा है; इसी से उसकी दादी बेहोश है, निरीह है, निरबलम्ब है, चुप है, भर रही है—हिल रही है। वह अपने में नहीं है—खो गई है। रात भीगे पैरों भागी जा रही है।

पत्ते खड़खड़ा रहे हैं। उस, प्रशांत नीरवता के हृदय की घड़कन जैसे बढ़ रही है। एक 'ठक' की आवाज होती है। कोई सामने आकर जैसे खड़ा हो जाता है। ओह..... वह लम्बे लंबाई में काली मञ्जुदार पगड़ी से लैस हाथ की लम्बी मोटी लकड़ी पर अफड़ दिये एक निपाही खड़ा है। उसे इस मुनसान रात में भागना हुई नहीं को जलधारा को देख कर जैसे 'ठक' भर गया है वह निश्चिन्त और मुग्ध है। उसने मुड़िया की ओर देखा था नहीं पर वह एक बार फिर कांप गई है।

## दान

अद्वैताचार्य, रामचन्द्र, ज्योतिषमाध और दुर्धमराय का  
आश्रमियों के साथ है।

अद्वैताचार्य एक छोटी सी कुकान में बीस रुपये का मोहर है।  
भी है, एक भी है। सुन्दर-बमर मुश्किल से होती है। कोर  
बमरों का बदनना है, जूना दुपट्टे दुपट्टे हो जाता है, टोपी का  
अर्थ बमर के लिए मंगे-मिर मोहरी पर जाना है। रामचन्द्र,  
ज्योतिषमाध मूर्ख हैं। आदि के योग हैं। कृष्ण के साथ भक्त हैं।  
मिना का नियमित पाठ करने और साथ पर अद्वैत योग का  
परम बाहर निरूपण है। अनाज की मंत्री में वृत्ताभी करते हैं।  
कृष्ण की कृपा में जानी जान हो जाती है। पर के योग प्रमत्त  
का मूर्ख हैं। ज्योतिषमाध किसी अपने गुरुवासी दुर्धम में है  
है। वेनन नील भी मगना है। बगुं रेखायी बढ़ने हैं। टोपी  
हस्त लगाने हैं। 'अद्वैता' का मिमंसेट पीने हैं। प्रायः इंदर में  
कोर बमर-बनी मेहिर जोर में मगर करते और बीसों रुपया  
अनर और बमों के व्यापार की ओर से बाकटर पैनी को अद्वैत  
करते हैं। दुर्धमराय, मंत्री नील माने, अद्वैत के अर्थवा मंत्री  
हैं। अद्वैत उदकी बमर है। अद्वैत-योग का बोट वा अद्वैत  
का अर्थ उद्वेग है। बमों दमों की रंगिलगी में बट्टे बट्टे  
का अर्थ उद्वेग है। अद्वैत अर्थवा अद्वैत है, अर्थवा





( ३ )

यह आवाज विलीन हुई थी कि रामचन्द्र जा पहुँचे । माथे पर अब तक चन्दन पुता हुआ था । मंद में कृष्ण का नाम निकल रहा था, और मन अनाज की मँडली में भूम रहा था ।

रमजू का भाव मट बदल गया । आँठ फैल गए, निकल आए, शरीर कंपने लगा, और स्वर में वही कातरता घुट निकली । हाथ फैलाकर चीख पड़ा—बाबा, एक बेना !...तेरे बचो की सीर .....

रामचन्द्र को कृष्ण-नाम और अनाज की मंड़ी के धितन में छोड़ दियापान न हुआ, और वह बिना डर के आगे बढ़ गया ।

रमजू ने मन्त्राण नेत्रों से देखा और धीरे से कहा—दाना लेगा धला करेगा ।

यह वाक्य अभ्यास-वश मंद में निकल गया था, या मन्त्र-मुग्ध बगड़ी बेसी इच्छा थी, इसे हम नहीं जानते ।

रामचन्द्र थोड़ी दूर आगे बढ़ा था कि किसी ने रोक दिया । नजर उठाकर देखा, तो एक जटाधारी मन्त्रामी । रामचन्द्र ने आवाज़ होकर फटे गाँवा, और फिर दोनों ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया ।

मन्त्रामी कर्तेश्वर में बोला—बोल, मानु की इच्छा पूरी करेगा ?

रामचन्द्र महमकूर बोला—कृतिव क्या दे महाराज ?

मन्त्रामी ने इतर बात देखा । मन्त्रक पर काइ न था । फिर वेम हो चुका स्वयं से बला । नर मर म कृष्ण का नाम दे । मन्त्रामी की इच्छा न पूरा । नर मर म कृष्ण का नाम दे ।

रामचन्द्र ने वही बात कहा । मन्त्रामी ने नजर डाला ।



यत्कथ्य को समझ करके, ज्योतिप्रसाद बोले—स्त्रीम तो अन्धी है!

जितनी देर में हैड-बिल समझ हुआ, सबकी नजर उनके चेहरे पर जमी रही। अब यह बात सुनकर जैसे सब-के-सब पानी का छोटा ग्लास आकर आगे उठे, और हर्षित होकर एक साथ बोले—अजी, यह तो आशा ही थी आपसे ।

ज्योतिप्रसाद ने कोशिश करके मंहु की मस्तिनता छिपाई और कहा—आप लोगों का साहस प्रशंसनीय है।

बिहारीलाल बोले—अजी देखिए, आज लाव्यों की मंदरा में अनाथ बच्चे बिधर्मी हो रहे हैं । (ज्योतिप्रसाद ने अनिश्चयपूर्वक पर ध्यान न दिया, और मंहु की मस्तिनता छिपाने के लिए फिर हिलाकर समर्थन किया।) ईसाई और मुसलमान इन बच्चों की श्रृंखला में मंहु-बागें फिरने हैं, और अन्ध में उन्ही की मदद से हमारे परिवर्धन पर कुटारापान करने हैं। अगर हमारे पूर्वज इस बात का ख्याल रखने, तो आज भारत में विधर्मियों की इतनी मंदरा कभी न होनी। (मस्तिनता का भाव छिपाने में कुछ-कुछ सफल हुए हैं, इसलिए ज्योतिप्रसाद बराबर समर्थन-सूचक मित्र हिलाता आ रहे हैं।) आज हमारे अनाथ बच्चों की जैसा दुर्दशा हो रही है, उसे दूर करने के लिए हिन्दू का छानी कट न जायगा? किमका हृदय हाहाकार न कर उठेगा? किमका ?

बिहारीलाल ने कुछ अपनी स्त्री-समझ का, ज्योतिप्रसाद को इसका हास नहीं । जैसे-जैसे उन्होंने पर नीचे झुल जाना है, जैसा ही बिहारीलाल की भावना का अवकाश करने पर उन्हें हास आता है। अब जैसा ही मैं कह रहा हूँ—कितना बड़ा समझ ?



कमर इस एक से निकालेंगा। दूर में देगा, और चिल्लाये  
 लगा—बाबा, मेरे बच्चों की छैर... बुझ देना... ।

इस बार देर में परिवर्तन कर दिया, क्योंकि एक पैने में  
 ज्यादा की आशा और अभिलाषा भी ।

हनुमन्तराय एक-एक पद रखते आगे बढ़े । माथे की  
 ग्योरी में गालूम होना था कि किसी गहरी चिन्ता में हैं । ऐसा  
 जान पड़ता था कि किसी ने उन्हें छेड़ा, तो बरस ही पड़ेंगे ।  
 पर रामजू को इनकी सुधि होनी, तो भीस्य क्यों मागता ? उसे  
 तो बस एक पैने में ज्यादा की धुन थी । उनका एक-एक कदम  
 पड़ना था, और उमक दिल पर जैसे चोट पड़नी थी । हर एक  
 कदम पर या हर एक चोट पर आवाज भी नेंद होनी जानी थी ।

सामने आने में नील पद की नेंद थी । रामजू गला काड़कर  
 चिल्लाया—बाबा, मेरे बच्चों की छैर... ।

हो पद वह गल । रामजू आगे सरक गया । आवाज फिर  
 निझली—बाबा, मेरे बच्चों... ।

एक ही पद वह गया था । रामजू की आंखें निकल आईं ।  
 पूरा आर लगाइए बोला—बाबा नर

हनुमन्तराय हाँक सामने आ गया । उसकी नजर में एक बाबा  
 भीमन हुए जल्लात की दशा । वह बाबा गल्लात में पड़ी नजर बाबा  
 इन्दने बाबा दूध गल्लात नर का । तो बहन आया पर वो बाबा ।

इस बाबा दूध का । बाबा आने में बाबा न बाबा  
 बाबा बाबा का । बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा  
 बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा  
 बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा बाबा



कमर इस एक में निहालंगा। दूर में देगा, और चिल्लाते लगा—बाबा, तेरे बच्चों की खैर... खुद देना... !

इस बार देर में परिवर्तन कर दिया, क्योंकि एक देर में ज्यादा की आशा और अभिलाषा थी।

हुकुमतराय एक-एक पद रखते आगे बढ़े ! माथे की खोरी से मालूम होता था कि किमी गहरी चिन्ता में हैं। ऐसा जान पड़ता था कि किमी ने उन्हें छेड़ा, तो बरस ही पड़ेंगे। पर रमजू को इतनी खुद्वि होती, तो भीस क्यों मांगता ? उसे तो बस एक ऐसे से ज्यादा की धुन थी। उनका एक-एक कदम पड़ता था, और उसके दिल पर जैसे चोट पड़ती थी। हर एक कदम पर या हर एक चोट पर आवाज भी तेज होती जाती थी।

सामने आने में तीन पद की देर थी। रमजू गला काड़कर चिल्लाया—बाबा, तेरे बच्चों की खैर...

दो पद रह गए। रमजू आगे सरक गया। आवाज फिर झिझली—बाबा, तेरे बच्चों...

एक ही पद रह गया था। रमजू की आँखें निकल आईं। पूरा खोर लगाकर बोला—बाबा, तेरे...

हुकुमतराय ठीक सामने आ गये। उन्होंने नजर से एक बार भीखते हुए भिखारी को देखा। विचार-भ्रमता में सुरी तरह घायल होनेवाले इस गरीब पर क्रोध तो बहुत आया, पर पी गये।

वह पिया हुआ कोय मानो अमांगे भिखारी ने वाह उगलवा लिया। क्या किया ? जब हुकुमतराय ने आगे रुक-रुकवा, तो आवेग में भरकर उभर उभरकर उस पर पकड़ लिया। मुह में बोला—बाबा, तेरे...

हुकुमतराय गिरने गिरने बचे। वह पिया हुआ कोय वाप





जब अधिक भीड़ इकट्ठी होनी देखी, और क्रोध का लामा  
स्पन्दन हो चुका, तो रायसाहब आगे बढ़े ।

चिल्लाने हुए समूह की तरफ किमी का ध्यान न था । मध-  
के-मध आश्रय की मूर्ति बने, सहसे-से, आर्त्तिक पूर्ण रायसाहब  
को निहार रहे थे । रामचन्द्र से मध्या हयवा गिटनेवाला और  
उपनिषद्वादी की किकड़ी माने वाला गम्मागी भी गुपचाप भीड़  
में गड़ा था ।

पर धीरे-धीरे दूर रह गया था । किमी ने आवाज दी ।  
रायसाहब —

रायसाहब ने पीछे फिरकर देखा—अनायास का हेतु-  
दोषन । आवाज बनवाला जगमगा था । रायसाहब से भी  
कमका मतारण्य वादचल था । उम्मी बल के आभार पर जगने  
आवाज दी थी

रायसाहब गम गम । राहुटगल के आंग गर्त मुझसे,  
बहर कचरनों की मोचन का दटाकने हुए आगे बढ़े । एक के  
हाथ में देह बिल ध, दूसरे ने रसादवृत्त ने रकमी थी, तीसरे के  
पाय देहा और हानगनवृत्त था । जगमगा गाली हाथ था ।

राम दग दगकर रायसाहब ने बहुत कुछ अनुमान कर लिया ।  
मुझसे आगे दूर तरफ स्पन्द नहीं हुआ था । यह नव हमने की  
नेवला दग । वा गीत में बल बढ़ गम । फिर भी बल रहे ।

राहुटगल गम आवा । मध ने दग जगदर आनददने  
‘दग’ गीत के गीत नव कच ‘बल’ हा रायसाहब ने गीत  
‘दग’ के नव नव नव नव नव । दग नव नव नव नव नव ।

राहुटगल नव नव । कच आनद नव नव आनद है ?

रायसाहब नव नव । कच आनद नव नव आनद है ?



जब अधिक भीड़ इकट्ठी होती देखी, और कोप का सामा-  
म्यलन हो चुका, तो रायसाहब आगे बढ़े ।

बिलायते हुए रामजू की तरफ किमी का ध्यान न था । मध-  
के-मध आश्चर्य की मूर्ति बने, सहमे-मे, आर्तक-पूर्ण रायसाहब  
को निहार रहे थे । रामचन्द्र से मया रुपया गैठनेवाला और  
उद्योतप्रसाद की मिड्डी माने वाला मन्थासी भी गुपचाप भीड़  
में खड़ा था ।

पर थोड़ी दूर रह गया था । किमी ने आवाज दी ।  
रायसाहब —

रायसाहब ने पीछे फिरकर देखा—अनायास का डेपु-  
टेशन । आवाज देनेवाला जगन्नाथ था । रायसाहब से भी  
उसका माधारण परिचय था । उमी बल के आधार पर उसने  
आवाज दी थी ।

रायसाहब धम गण । डेपुटेशन के लोग गर्दन झुकाये,  
बहर के बुरतों की भीषण को टरोसते हुए आगे बढ़े । एक के  
हाथ में हँड बिल थे, दूसरे ने रमीदयुक्त ले रक्खी थी, तीसरे के  
पाम पैली और होनगनबुक थी । जगन्नाथ सावली हाथ था ।

तब तब देखकर रायसाहब ने बहुत कुछ अनुमान कर लिया ।  
मुम्मा अनायास की तरह गाल नहीं हुआ था । यह नये हमले की  
दशाद दध ना योग में बल बढ़ गण । फिर भी धमे रहे ।

डेपुटेशन राम आया । मध ने हाथ जोड़कर अभिवादन  
किया । मध के लिए नष्ट किये बिना ही रायसाहब ने मिर  
होनगन अनायास का उलट दिया । डेपुटेशन कुछ शक्ति हुआ ।

आज १२५४ — कतिप, आपका मित्रास तो अच्छा है ?

रायसाहब ने जवाब दिया—आ हा आप इतर क्या पान ?

